रामायण की विशेष शिक्षाएँ

स्वामी ब्रह्ममुनि

॥ ओ३म् ॥

रामायण की विशेष शिक्षाएँ

(रामायण दर्पण)

लेखक
स्वामी ब्रह्ममुनि

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

पुस्तक गलती :- पुस्तक में रावण के बारे में लिखा है की उसने माता सीता के साथ बलपूर्वक समागम नहीं किया जिसके कारण रावण को कुछ ठीक बता दिया इसमें

सत्य :- रामायण के अनुसार रावण को ब्रह्मा जी का श्राप था की अगर अब तुमने किसी और के साथ बलपूर्वक समागम किया तो तेरे सर के टुकड़े हो जाएगे

अतः ध्यान रहे बद्दुआ बहुत जल्दी लगती है ✍ तो श्राप सत्य है

2. उत्तरकाण्ड पूरी तरह से मिलावट है यही सत्य है.

लेकिन लेखक ने उससे भी कुछ बाते लिखी है तो ध्यान रहे उसका भी ✍

दो शब्द

संसार की विभिन्न भाषाओं में जो उच्चकोटि के महाकाव्य हैं उनमें रामायण का स्थान निःसंदेह सबसे ऊँचा है। इलियड, ओडेसी तथा अन्य प्राचीन ग्रन्थों में हमें महाकाव्य की अन्य विशेषतायें भले ही मिल जाती हैं किन्तु रामायण में जो आस्तिकता, धार्मिकता, प्रभुभक्ति और उच्च नैतिक आदर्श का दिग्दर्शन स्थान-स्थान पर मिलता है वह अन्य विदेशीय भाषाओं के महाकाव्यों में बहुत कम देखने को मिलता है। यही कारण है कि आस्तिक संसार में साहित्यिक हृदय वाले मानवों के लिये रामायण से बढ़कर कोई दूसरा ग्रन्थ नहीं है।

आज के हिन्दी साहित्य में गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस का स्थान कितना ऊँचा है, यह किसी से अविदित नहीं है। भारत के प्रत्येक प्रान्त में, नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में और घर-घर में हिन्दी रामायण का गुटका तो मिल ही जायगा। शायद ही किसी हिन्दू का घर ऐसा हो जिसमें तुलसी रामायण उपस्थित न हो। उसकी इतनी सर्वप्रियता क्यों है? उसके सरल हिन्दी भाषा में होने से जिसको एक साधारण सा शिक्षित हिन्दू भी पढ़ सकता है। इसके विपरीत वाल्मीकि रामायण संस्कृत में होने से साधारण जनता की सर्वप्रिय वस्तु नहीं बन सकी, यद्यपि महाकाव्य की दृष्टि से उसमें कोई त्रुटि नहीं और धार्मिक भावना तथा चरित्र-चित्रण आदि में दोनों ही उच्च स्थान रखती है।

हमें हर्ष है कि संस्कृत-साहित्य-महासागर के रामायण सिन्धु में जो अमोल रत्न भरे पड़े थे और साधारण जनता के लिये अगम्य और दुष्प्राप्य थे उनको संस्कृत के उद्भट् विद्वान् श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी महाराज ने अपनी लौह लेखनी से मन्थन करके हमारे सम्मुख ला रखे हैं। वाल्मीकि रामायण के जगत् प्रसिद्ध पात्रों का चरित्र चित्रण, उनके गुण और विशेषताओं का सजीव वर्णन लेखक ने सप्रमाण बड़े सुन्दर ढंग से किया है। साथ ही पुस्तक के उत्तरार्ध में रामायणकाल के कला-कौशल, रीति-नीति आदि का जो दिग्दर्शन कराया गया है वह समीचीन ही है। ऐसी उत्तम शिक्षा समन्वित प्रमाणप्रपूरित पुस्तक को लिखकर श्री स्वामी जी महाराज ने सर्वसाधारण जनता का बड़ा उपकार किया है। इस 'रामायण की विशेष शिक्षाएँ' में न केवल रामायण के पात्रों और शिक्षाओं का ही दर्शन होता है अपितु उसके दर्शकों (पाठकों) को उन्नत बनाने में भी उससे सहायता मिलेगी, ऐसा मेरा विश्वास है। एवमस्तु!

सूर्यदेव शर्मा
साहित्यालंकार, सिद्धान्तशास्त्री,
एम.ए., एल. टी., डी. लिट्
वाइस प्रिंसिपल, डी. ए. वी. कालेज, अजमेर

अजमेर
15 अक्टूबर, 1947

विषय-सूची

सीता

दशरथ

कैकेयी

कौशल्या

सुमित्रा

रावण

राम

रामायण के कुछ धार्मिक वर्णन

सामाजिक

नागरिक शिष्टाचार एवं प्रथाएँ

पारिभाषिक शब्द और कारनाम (मुहावरे)

रामायण काल की विशेष वस्तुएँ

राष्ट्र तथा राष्ट्रीय वर्णन

देश

कलाकौशल और विज्ञानविद्या

नगर उद्यान की कला

आयुध (शस्त्रास्त्र)

हस्तशिल्प

यन्त्र-यान

विमान (वायुयान)

विज्ञान

भरत

रामायण में भरत का स्थान ऊँचा है। भरत में मर्यादावत्ता, धार्मिकता, राम के प्रति स्नेह और ज्येष्ठानुवृत्ति अत्यधिक थी। जिस भरत को राज्य दिलाने के लिये कैकेयी ने राम को वनवास दिलाया, पुनः राम के वनवास-शोक में दशरथ का प्राणान्त हो जाने पर मन्त्रियों ने राजसिंहासन पर बैठाने के लिये राम के वनवास आदि वृत्तान्त को गुप्त रख पिता दशरथ की ओर से भरत को मातुलगृह से बुलाया, पुनः भरत के अयोध्या पहुँचने पर मंत्रियों ने उसे राम के वनवास और पिता के देहान्त को सुनाकर राजसिंहासन पर बैठने की अनुमति दी तो वह भरत राज्य-प्राप्ति में प्रसन्न नहीं होता किन्तु निम्न विलाप करता हुआ अचेत हो भूमि पर गिर पड़ता है-

अभिषेक्ष्यति रामं तु राजा यज्ञं नु यक्ष्यते।
इत्यहं कृतसङ्कल्पो हृष्टो यात्रामयासिषम्॥

(वा० रा० अयो० 72।27)

मेरा पिता राजा दशरथ राम का राज्याभिषेक करने के हेतु राजसूय यज्ञ करेगा यह सङ्कल्प मन में रखकर प्रसन्न हो मैं चला था। हाय! यह क्या हुआ?

यह है भरत के सौजन्य का प्रथम दृश्य! राज्यश्री को प्राप्त करने के लिये आजकल लोग भ्राता का वध तक देते हैं, परन्तु जिसमें भरत निरपराध में ऐसी राज्यप्राप्ति में भी प्रसन्नता के स्थान पर विलाप करता है, अचेत हो जाता है, पुनः चेतना प्राप्त करके अपनी माता कैकेयी को

धिक्कारता है—

दुःखे मे दुःखमकरोर्व्रणे क्षारमिवाददाः।
राजानं प्रेतभावस्थं कृत्वा रामं च तापसम्॥
कुलस्यास्य त्वमभावाय कालरात्रिरिवागता॥

(वा० रा० अयो० 73।3, 4)

हे माता! तूने दुःख में दुःख दिया, घाव पर नमक छिड़का, पिता को मृत्यु के मुख में पहुँचाया और राम को वनवासी बनाया! इस कुल के नाशार्थ तू काल-रात्रि बनी।

अब भरत केवल इतने पर ही सन्तोष करके नहीं रह जाता कि जो होना था सो हो गया, राम तो चले गये, राज्यभार तो सँभालना ही पड़ेगा। परन्तु भरत तो राम की खोज में घर से बाहर निकल पड़ता है, मार्ग में एक स्थान पर गंगा के किनारे इङ्गुदिवृक्ष के नीचे घास पर राम के रात बिताने—सोने के सम्बन्ध में विलाप करता है—

हा हतोस्मि नृशंसोऽस्मि यत् सभार्यः कृते मम।
ईदृशीं राघवः शय्यामधिशेते ह्यनाथवत्॥

(वा० रा० अयो० 17।88)

हा! मैं मरा। मैं हत्यारा हूँ जो मेरे कारण पत्नीसहित राम अनाथ की भाँति ऐसी धरती रूप शय्या पर सोता है।

भरत का कार्य केवल विलाप करने तक ही समाप्त नहीं होता किन्तु उसने राम की खोज कर उनकी सेवा में पहुँच अयोध्या लौटने का बहुत आग्रह किया, पर अति प्रयत्न करने पर भी राम नहीं लौट पाए तब भरत विवश हो क्या राज्यलक्ष्मी का उपभोग करता है? नहीं, नहीं, किन्तु राम की पादुकाएँ प्रतिनिधिरूप में लेकर स्वयं वानप्रस्थी का रूप धारण कर नन्दीग्राम नाम के आश्रम में राम के लौटने की प्रतीक्षा करता हुआ 14 वर्ष बिताता है--

स पादुके संप्रणम्य रामं वचनमब्रवीत्।
चतुर्दश हि वर्षाणि जटाचीरधरो ह्यहम्॥
फलमूलाशनो वीर भवेयं रघुनन्दन।
तवागमनमाकांक्षन् वसन् वै नगराद्बहिः॥
तव पादुकयोर्न्यस्य राज्यतंत्रं परन्तप।
चतुर्दशे हि सम्पूर्णे वर्षेऽहनि रघूत्तम॥
न द्रक्ष्यामि यदि त्वां तु प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्।

(वा० रा० अयो० 112।23-25)

भरत ने राम की चरणपादुकाएँ लेकर कहा कि हे राम! चौदह वर्ष तक जटावल्कलधारी वानप्रस्थ बन फल, मूल खाता हुआ आपके आगमन की आकांक्षा रखता हुआ नगर से बहिर वसता हुआ रहूँगा, चौदहवें वर्ष के पूर्ण होने के दिन यदि मैं आपको न देख सका तो अग्नि में जल जाऊँगा।

राम के आगमन की प्रतीक्षा में भरत की क्या दशा थी यह हनुमान् के मुख से भी सुनिये जब कि लङ्का विजय कर श्रीराम ने अयोध्या लौटते हुए हनुमान् को भरत का हाल जानने के लिये भेजा था—

आससाद द्रुमान् फुल्लान् नन्दिग्रामसमीपगान्।
क्रोशमात्रे त्वयोध्यायाश्चीरकृष्णांजिनाम्बरम्॥
ददर्श भरतं दीनं कृशमाश्रमवासिनम्।
जटिलं मलदिग्धाङ्गं भ्रातृव्यसनकर्शितम्॥
फलमूलाशिनं दान्तं तापसं धर्मचारिणम्॥
समुन्नतजटाभारं वल्कलाजिनवासिनम्।
नियतं भावितात्मानं ब्रह्मर्षिसमतेसजम्॥

(वा० रा० युद्ध० 125।27, 29, 31)

अर्थात् अयोध्या नगरी से कोश भर की दूरी पर वल्कल और कृष्णाजिन धारण किये हुए दुःखी कृश जटिल धूलिधूसरित

शृङ्गारहीन भातृशोक में व्याकुलित फलमूलाहारी दयनीय तपस्वी धर्मचारी खुले केश वाले वृक्षछाल और अजिन पर बैठे हुए नियतेन्द्रिय भावुक ब्रह्मर्षिसदृश भरत को राम के आदेश से हनुमान् ने देखा।

यहाँ भरत का आदर्श कितना ऊँचा है, राम ने राज्य त्यागा और वनवास लिया बलात् अर्थात् पिता की आज्ञा से परन्तु भरत ने राज्यश्री को त्यागा और वानप्रस्थी बना स्वेच्छा से, राम के प्रति ज्येष्ठानुवृत्तिधर्म एवं मर्यादा के पालनार्थ भरत का त्याग राम के त्याग से कम नहीं है किन्तु इस दृष्टि से ऊँचा ही है।

इतना ही नहीं, भरत के विचार तो और भी ऊँचे थे जैसे वह अपनी माता कैकेयी को सम्मुख कर कहते हैं कि–

आनाय्य च महाबाहुं कोशलेन्द्रं महाबलम्।
स्वयमेव प्रवेक्ष्यामि वनं मुनिनिषेवितम्।।
नह्यहं पापसङ्कल्पे पापे पापं त्वया कृतम्।
शत्को धारयितुं पौरैरश्रुकण्ठैर्निरीक्षितः।।
सा त्वमग्निं प्रविश वा स्वयं वा विश दण्डकान्।
रज्जुं बधान वा कण्ठे नहि तेऽन्यत्परायणम्।।

(वा० रा० अयो० 74।31–33)

हे पापे! मैं उस महाबलवान् राम को लाकर स्वयं वन में चला जाऊँगा, तूने बड़ा पाप किया है, मैं आँसूभरे प्रजाजनों के दृष्टिपथ होते हुए राम को सोच नहीं सकता, वह तू अग्नि में प्रविष्ट होजा या स्वयं दण्डकावन चली जा या कण्ठ में रज्जु बान्ध कर फाँसी ले ले।

भरत में राम के प्रति भक्तिप्रेम ज्येष्ठानुवृत्ति का परिचय इससे भी मिलता है जब कि लङ्काविजय कर हनुमान् राम के आगमनकुशल का सन्देश भरत को देने आता है–

एवमुक्तो हनुमता भरतः कैकेयीसुतः।
पपात सहसा हृष्टो हर्षान्मोहमुपागमत्॥
ततो मुहूर्तादुत्थाय प्रत्याश्वास्य च राघवः।
हनुमन्तमुवाचेदं भरतः प्रियवादिनम्॥
अशोकजैः प्रीतिमयैः कपिमालिङ्ग्य संभ्रमात्।
सिषेच भरतः श्रीमान् विपुलैरस्रविन्दुभिः॥

(वा० रा० युद्ध० 125।40-42)

इस प्रकार राम के आगमनकुशलसन्देश को सुनकर भरत प्रसन्न एवं हर्ष से मोहित हो भूमि पर गिर पड़ा, पुनः कुछ देर में सँभल आश्वासन के साथ प्रियवादी हनुमान् को आलिङ्गन कर आदर से बोला और हर्षजनक प्रीतिभरे बहुत आँसुओं से उसे सिञ्चित किया।

यहाँ तक तो भरत ऊँचे जीवन वाला है। यह उसके निजी जीवन वृत्तान्तों से स्पष्ट हुआ। अब इसके सम्बन्ध में साक्षी रूप से राम तथा दशरथ के वचन भी सुनिये—

न भ्रातरस्तात भवन्ति भरतोपमाः।

(वा० रा० युद्ध० 18।15)

राम सुग्रीव से कहते हैं कि भरत जैसे भ्राता सभी नहीं होते। तथा—

कैकेयी को समझाते और मनाते हुए दशरथ कहते हैं कि—

न कथञ्चिद् ऋते रामाद् भरतो राज्यमावसेत्।
रामादपि हि तं मन्ये धर्मतो बलवत्तरम्॥

(वा० रा० अयो० 12।62)

अयी कैकेयी! तू जिस भरत के लिये राज्य के निमित्त राम को वनवास दिला रही है वह विना राम के किसी प्रकार भी राजसिंहासन पर नहीं बैठ सकता क्योंकि वह राम से भी

धर्म में अधिक प्रबल है, ऐसा मैं मानता हूँ।

इस प्रकार भरत का जीवन राम से कम आदर्श नहीं था। राम के जीवन की विशेषताएँ और ही हैं जो राम के प्रकरण में कहेंगे। भरत जैसे भाई यदि परिवार में हों तो परिवार बहुत सुखमय बन सके और कभी भी दुःख तथा कलह को स्थान न मिले, अस्तु।

भरत के दो पुत्र थे एक 'तक्ष' दूसरा 'पुष्कल।' तक्ष ने तक्षशिला (पंजाब में रावलपिण्डी के कुछ टैक्सिला नाम से प्रसिद्ध) और पुष्कल ने गन्धर्व (गान्धार-कन्धार) देश में पुष्कलावत नगर को बसाया–

तक्षं तक्षशिलायां पुष्कलं पुष्कलावते।
गन्धर्वदेशे रुचिरे गन्धारनिलये च सः॥

(वा० रा० उत्तर० 101।11)

लक्ष्मण

लक्ष्मण भी रामायण का एक आदर्श पात्र है। लक्ष्मण की तपस्या और धर्मभाव राम से कम नहीं है। राम ने वनवास लिया बलात् पिता के शासन से, परन्तु लक्ष्मण स्वेच्छा से वन को राम के साथ चल दिया, ज्येष्ठानुवृत्ति, स्नेह और धर्मभाव के कारण। लक्ष्मण का वनवास तो राम से भी ऊँचा है, राम तो वन में अपने विनोद-प्रमोद की साधनभूत अपनी धर्मपत्नी सीता को भी साथ ले गये थे परन्तु लक्ष्मण तो अपनी धर्मपत्नी ऊर्मिला को साथ नहीं ले गये। लक्ष्मण ब्रह्मचारी था। यह लोगों में एक प्रवाद है किन्तु वह विवाहित था उसकी धर्मपत्नी सीता की छोटी बहिन जनक-सुता ऊर्मिला थी, रामायण में कहा है-

ददामि परमप्रीतो वध्वौ ते मुनिपुंगव।
सीतां रामाय भद्रं ते ऊर्मिलां लक्ष्मणाय वै।।

(वा० रा० बाल० 72।20)

विश्वामित्र से जनक कहते हैं कि मैं परम प्रसन्न हो राम के लिये सीता को और लक्ष्मण के लिये ऊर्मिला को देता हूँ।

तथा-

मम चैवानुजा साध्वी ऊर्मिला शुभदर्शना।
भार्यार्थे लक्ष्मणस्यापि दत्ता पित्रा मम स्वयम्।।

(वा० रा० अयो० 118।53)

सीता कहती है कि मेरी छोटी बहन ऊर्मिला मेरे पिता ने लक्ष्मण को दी।

लक्ष्मण को ब्रह्मचारी कहा जा सकता है पत्नी के साथ

न होने के कारण, क्योंकि वनवास में उसे पत्नी रहित रहना पड़ा। संयम के कारण तो राम भी ब्रह्मचारी कहे जा सकते हैं, देखिये राम ने अपने को और लक्ष्मण को संयमवश ब्रह्मचारी कहा भी है–

पुत्रौ दशरथस्यावां भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ।
प्रविष्टौ सीतया सार्धं दुश्चरं दण्डकावनम्।।
फलमूलाशनौ दान्तौ तापसी ब्रह्मचारिणौ।

(वा० रा० अरण्य० 120।8)

राम कहते हैं कि दशरथ के पुत्र हम दोनों भ्राता राम लक्ष्मण फलमूल खाने वाले दमनशील (जितेन्द्रिय) तपस्वी ब्रह्मचारी सीता के साथ गहन दण्डकारण्य में आए हैं।

राम के लिए देहत्याग का आदर्श–

लक्ष्मण के आदर्श होने का दूसरा दृश्य यह है कि वह राम के बदले में स्वयं मरना पसन्द करता है–राम को लक्ष्मण कहता है–

मां हि भूतबलिं दत्वा पालयस्व यथासुखम्।
अधिगन्तासि वैदेहोमचिरेणेति मे मतिः।।
प्रतिलभ्य च काकुत्स्थ पितृपैतामहीं महीम्।
तत्र मां राम राज्यस्थ; स्मर्तुमर्हसि सर्वदा।।

(वा० रा० अरण्य० 69।39-40)

अयि राम! इस कबन्ध राक्षस के लिये मुझे बलि देकर तू सीता को शीघ्र प्राप्त कर लेगा पुनः अपने बाप दादाओं की राष्ट्रभूमि को प्राप्त कर राज्य में स्थित हुआ मेरा स्मरण कर लिया करना।

आश्चर्य है इतना ऊँचा करुणाजनक आदर्श, लक्ष्मण भ्राता के लिये प्राण देने को उद्यत है। आज सब को अपना-अपना प्राण प्यारा है, कोई किसी के लिये प्राण नहीं

दे सकता।

सदाचार का आदर्श–

नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे त्वाभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्॥

(वा० रा० किष्कि० ५।२२)

सीता की खोज करते हुए मार्ग में पड़े कुछ भूषण देख राम जब लक्ष्मण से पूछने लगे कि हे लक्ष्मण! तुम इन भूषणों को पहचानते हो, ये सीता के हैं? तो उत्तर में लक्ष्मण कहता है कि मैं सीता के बाहुभूषण नहीं जानता और न कानों के कुण्डल ही पहचानता हूँ किन्तु नूपुर (पैर के भूषण) तो जानता हूँ क्योंकि नित्य पादाभिवन्दन (चरण प्रणाम) करने से।

लक्ष्मण की दृष्टि जानबूझकर सीता के पैरों पर ही पड़ती थी। अन्य किसी अंग पर नहीं, अन्य किसी अङ्ग पर क्या भूषण हैं, इसका जानना तो दूर की बात है। इतना ऊँचा सदाचार का उदाहरण मिलना दुर्लभ है।

लक्ष्मण के सदाचार की छाप सीता पर भी थी, सीता हनुमान् से कहती है।

पितृवद् वर्तते रामे मातृवन्मां समाचरत्।

(वा० रा० सुन्दर० ३।५०)

अयि हनुमान्! राम में लक्ष्मण पिता के समान और मेरे प्रति माता के सदृश आचरण करता था।

स्त्री के प्रति लक्ष्मण की अवाङ्मुखता अन्यत्र भी देखने में आती है–

स तां समीक्ष्यैव हरीशपत्नीं तस्थावुदासीनतया महात्मा।
अवाङ्मुखोऽभून्मनुजेन्द्रपुत्रः स्त्रीसन्निकर्षाद्विनिवृत्त कोषः॥

(वा० रा० किष्कि० 33।39)

तारा नाम की बालि-पत्नी को देखकर ही उदासीन भाव अर्थात् उपेक्षा से लक्ष्मण अवाङ्मुख खड़ा हो गया।

वैराग्य की मूर्त्ति लक्ष्मण-

राम के साथ निजपत्नी को त्याग कर लक्ष्मण का चल पड़ना उसके पूर्ण वैराग्य और संयमशीलता को तो प्रकट करता ही है परन्तु वह राम को भी अवसर पर वैराग्य का उपदेश देता है-

स्मृत्वा वियोगजं दुःखं त्यज स्नेहं प्रिये जने।
अतिस्नेहपरिष्वङ्गाद् बर्तिरार्द्रापि दह्यते।।

(वा० रा० किष्कि० 1।118)

अयि राम! सीता को स्मरण करके इसके वियोग का दुःख होता है इसलिये उसके प्रति अब स्नेह छोड़, क्योंकि सिवाय अन्तर्दाह के और क्या होता है। (वियोग से दुःख होता है इस प्रकार परिणाम का ध्यान करके प्रिय जन के स्नेह को छोड़ दे] अति स्नेह (घृत, तेल आदि चिकनाई) के सङ्ग से गीली बत्ती भी दग्ध हो जाती है। तथा-

स चिन्तया दुःसहया परीतं विसंज्ञमेकं विजने तपस्वी।
भ्रातुर्विशादात्त्वरितोऽतिदीनः समीक्ष्य सौमित्रिरुवाच रामम्।।
किमार्य कामस्य वशङ्गतेन किमात्मपौरुषस्य पराभवेन।
अयं सदा संह्रियते समाधिः किमत्र योगेन निर्वर्तितेन।।
क्रियाभियोगं मनसः प्रसादं समाधियोगानुगतं च कालम्।
सहायसामर्थ्यमदीनसत्वः स्वकर्महेतुं च कुरुष्व तात।।

(वा० रा० किष्कि० 29।15-17)

निर्जन स्थान में असह्य चिन्ता से घिरे हुए घबराए हुए राम को देख मनस्वी लक्ष्मण भ्राता के दुःख से दीनता को प्राप्त हो तुरन्त राम को बोला, हे आर्य! आपके इस पुरुषार्थनाशक कामवशित्व से क्या लाभ? उस से यह आपकी

स्थिर समाधि मानसिक एकाग्रता स्वस्थता नष्ट ही होती है। आपके इस साधित योग से क्या लाभ? मन के प्रसन्न एवं स्वस्थ करने वाले समाधि के अनुकूल उचित क्रियानुष्ठान-रूप सहायसामर्थ्य को कर्म के हेतु वीर बनकर सेवन कर।

इस प्रकार कई दृष्टियों से लक्ष्मण का जीवन भी राम से न्यून आदर्श न था अपितु बढ़ा चढ़ा ही था, राम की अन्य ही विशेषताएँ हैं जो राम के प्रकरण में दर्शाई जायेंगी।

लक्ष्मण के दो पुत्र अङ्गद और चन्द्रकेतु तथा उनके स्थान-

अङ्गदीया पुरी रम्याप्यङ्गदस्य निवेशिता।
चन्द्रकेतोश्च मल्लस्य मल्लभूम्यां निवेशिता॥
चन्द्रकान्तेति ख्याता दिव्या स्वर्गपुरी यथा।

(वा० रा० उत्तर० 102।8-11)

कारुपथ देश में अङ्गदीया नाम की पुरी अङ्गद की और चन्द्रकेतु की मल्ल देश में चन्द्रकान्ता पुरी थी, अङ्गद की पश्चिममुख और चन्द्रकेतु की उदङ्मुख थी।

सीता

सीता समस्त संसार की नारियों के लिये आदर्श नारी थी। पति के सुख दुःख में अपना सुख दुःख मानना, पति के आवास-प्रवास में अपना सहयोग देना स्त्री का धर्म है अतएव राम के वनवास जाते समय सीता राम को कहती है-

पति-सहयोग-

यदि त्वं प्रस्थितो दुर्गं वनमद्यैव राघव।
अग्रतस्ते गमिष्यामि मृजन्ती कुशकण्टकान्।।

(वा० रा० अयो० 27।7)

'अयि राम! यदि तू आज ही कठिन वन को प्रस्थान कर रहा है तो मैं तुम्हारे आगे-आगे कुशकाँटों को रौंदती-नष्ट करती हुई चलूँगी।

सीता ने बिना राम के कहे तथा बिना किसी झिझक के ही वनवास में साथ जाने का भावनापूर्ण अपना प्रस्ताव रखा। राम ने अनेक प्रकार के कष्टों का भय दिला-दिला कर सीता को वन में न जाने के लिये कहा परन्तु सीता नहीं मानती और कहती है-

ये त्वया कीर्तिता दोषा वने वस्तव्यतां प्रति।
गुणानित्येव तान् विद्धि तव स्नेपुहरस्कृतान्।।

(वा० रा० अयो० 29।2)

हे राम! जो तुमने वन में रहने के कष्ट रूप दोष दर्शाए हैं याद रखो तुम्हारे स्नेह के सन्मुख वे तो गुण ही हैं।

कुशकाशशरेषीका ये च कण्टकिनो द्रुमाः।
तूलाजिनसमस्पर्शा मार्गे मम सह त्वया।।

(वा० रा० अयो० 30।12)

अयि राम! कुश काश शर शलाका तथा अन्य जो काँटे वाले झाड़-झँखाड़ होंगे वे सब तुम्हारे साथ मेरे मार्ग में रुई और मृदु रोम बिस्तरे (पश्मीने) के जैसे स्पर्श वाले होंगे। अतएव मैं तुम्हारे साथ अवश्य वन जाऊँगी।

सीता की पतिव्रतता—

सीता...तृणमन्तरतः कृत्वा प्रत्युवाच शुचिस्मिता।

(वा० रा० सुन्दर० 21।22)

जब रावण सीता से अपना अभिप्राय कहता है तो वह पतिव्रता देवी सीता चकित हुई उसका उत्तर अपने और रावण के बीच में तृण रख कर देती है कि—

शक्या लोभयितुं नाहमैश्वर्येण धनेन वा।
अनन्या राघवेणाहं भास्करेण प्रभा यथा॥
उपधाय भुजं तस्य लोकनाथस्य सत्कृतम्।
कथं नामोपधास्यामि भुजमन्यस्य कस्यचित्॥
अहमौपायिकी भार्या तस्यैव वसुधापतेः।
व्रतस्नातस्य धीरस्य विद्येव विदितात्मनः॥

(वा० रा० सुन्दर० 21।15-17)

अयि रावण! तू मुझे ऐश्वर्य या धन से लोभायमान नहीं कर सकता, मैं सूर्य से प्रभा की भाँति राम से अभिन्न हूँ। उस सम्राट्-राम की भुजा का सहारा लेकर अन्य किसी का कैसे सहारा ले सकती हूँ। सच मैं उसकी ऐसी सच्ची वशीभूत हूँ जैसे धीर आत्मज्ञानी स्नातक की विद्या सच्ची वशीभूत होती है।

तथा—

त्वं पुनर्जम्बुकः सिंहीं मामिहेच्छसि दुर्लभाम्।
नाहं शक्या त्वया स्प्रष्टुमादित्यस्य प्रभा यथा॥

(वा० रा० अरण्य० 47।36)

सीता कहती है– अयि रावण! तू गीदड़ है, मुझ अप्राप्य सिंहनी को चाहता है, मुझे तू सूर्य की ज्योति के समान छू नहीं सकता।

तथाहं धर्मनित्यस्य धर्मपत्नी दृढव्रता।
त्वया स्प्रष्टुं न शक्याहं रक्षसा धर्मपापिना॥

(वा० रा० अरण्य० 56।19)

मैं सदा धर्मपरायण राम की दृढ़व्रतवाली धर्मपत्नी हूँ। तू राक्षस अधम मुझे छू नहीं सकता।

भर्तुर्भक्तिं पुरस्कृत्य रामादन्यस्य वानर।
नाहं स्प्रष्टुं स्वत गात्रमिच्छेयं वानरोत्तम॥

(वा० रा० सुन्दर० 36।62)

हे हनुमान्! तुम बलवान् हो पर तुम्हारे साथ तुम्हारे अङ्ग का सहारा ले मैं नहीं जा सकती क्योंकि भर्ता की भक्ति को सम्मुख रखकर राम से भिन्न किसी के गात्र को स्वेच्छा से स्पर्श करना नहीं चाहती।

सीता सन्ध्या करती थी–

सीता केवल पतिव्रता ही थी ऐसा नहीं, अपितु वह सन्ध्योपासना भी करती थी–

सन्ध्यायमाना श्यामा[1]ध्रुवमेष्यति जानकी।
नदीं चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी॥

(वा० रा० सुन्दर० 15।41)

हनुमान् सीता के सम्बन्ध में विचार करता है कि सन्ध्याशील सीता सन्ध्या के लिये अवश्य इस सुन्दर जलवाली

---

1. यहाँ 'श्यामा' का तात्पर्य उत्तम से है काले वर्ण से नहीं, क्योंकि सीता को सुवर्णरंगवाली कहा है "इयं कनकवर्णश्री रामस्य महिषी प्रिया।" (वा० रा० सुन्दर० 15। 46)

नदी पर आयेगी।

सीता धर्मतत्त्व जानने वाली थी अतएव उसने अवसर पर राम को भी उपदेश दे दिया–

अपराधं विना हन्तुं लोकान् वीर न कामये।
क्षत्रियाणां दु वीराणां वनेषु नियतात्मनाम्।।
धनुषा कार्यमेतावदार्तानामभिरक्षणम्।
क्व च शस्त्रं क्व च वनं क्व च क्षात्रं तपः क्व च।।
आत्मानं नियमैस्तैस्तैः कर्षयित्वा प्रयत्नतः।
प्राप्यते निपुणैर्धर्मो न सुखाल्लभते सुखम्।।
नित्यं शुचिमतिः सौम्य चर धर्मं तपोवने।

(वा० रा० अरण्य० 9।25, 26, 51)

हे राम! विना अपराध के लोगों को मारना मुझे पसन्द नहीं। वन में रहते हुए जितेन्द्रिय वीर क्षत्रियों का धनुष से इतना ही प्रयोजन है कि दुःखितों की रक्षा करे। भला कहाँ क्षत्र (राज्य) और कहाँ यह वनवास! तथा कहाँ शस्त्र और कहाँ यह तप है! किन्तु हे राम! उन–उन नियमों से अपने आत्मा को प्रयत्न के साथ संयत करके ही चतुर जन धर्म को प्राप्त करते हैं नियमित रहित होकर सुगमता से धर्म प्राप्त नहीं होता। अतः इस तपोवन में नित्य पवित्र मतिवाला होकर धर्म का आचरण कर।

सीता ने यहाँ कितना सुन्दर तपस्वियों का धर्म राम को बतलाया है। इस प्रकार सीता धर्म के तत्त्व को राम से कम न जानती थी किन्तु धर्मनिष्ठ और धर्मवित् थी। भारत की नारियों को सीता से यह शिक्षा भी लेनी चाहिये कि वे धर्म का ज्ञान रखते हुए स्वयं धर्म परायण होकर अपने पतिदेव को अवसर पर अधर्म से बचा धर्म की ओर प्रेरित करें।

दशरथ

दशरथ के सम्बन्ध में यह आक्षेप किया जाता है कि उसने तीन विवाह किए हैं जो मर्यादा से बाहर की बात है। परन्तु स्मरण रखना चाहिये की कौटिल्य आदि राज धर्म–प्रतिपादक शास्त्रों में वंशच्छेदन हो रहा हो तो राजाओं को अनेक विवाह करने का आदेश दिया है। दशरथ के सन्तान नहीं हुई थी यह बात वाल्मीकि रामायण से स्पष्ट है–

सुतार्थं तप्यमानस्य नासीद् वंशकरः सुतः।

(वा० रा० बाल० 8।1)

अर्थात् सन्तानार्थ दुःखित दशरथ के वंश चलाने वाला पुत्र नहीं था।

राम का जन्म भी दशरथ की 44 वर्ष की आयु में हुआ था।

ऊनषोडशवर्षो मे रामो राजीवलोचनः।
षष्टिवर्षसहस्राणि जातस्य मम कौशिक॥

(वा० रा० बाल० 20। 2, 12)

दशरथ विश्वामित्र ऋषि से कहते हैं कि हे विश्वामित्र! मेरा राम 16 वर्ष से भी कम आयु वाला है और मेरी आयु तो 60 वर्ष से भी बहुत अर्थात् अधिक या ऊपर है "सहस्र बहुनाम" (निघं०)

राजा दशरथ बड़ा धार्मिक एवं प्रजा और राष्ट्र का पूर्ण रक्षक था–

प्रहृष्टमुदितो लोकस्तुष्टः पुष्टः सुधार्मिकः।
निरामयो ह्यरोगश्च दुर्भिक्षभयवर्जितः॥
न पुत्रमरणं केचिद् द्रक्ष्यन्ति पुरुषाः क्वचित्।
नार्यश्चाविधवा नित्यं भविष्यन्ति पतिव्रताः॥
न चाग्निजं भयं किञ्चिन्नाप्सु मज्जन्ति जन्तवः।
न वातजं भयं किञ्चिन्नापि ज्वरकृतं तथा।
न चापि क्षुद्भयं तत्र न तस्करभयं तथा॥
नगराणि च राष्ट्राणि धनधान्ययुतानि च।
नित्यं प्रमुदिताः सर्वे यथा कृतयुगे तथा॥

(वा० रा० बाल० 1।89-92)

दशरथ के राज्य में जन हर्षित, प्रसन्न, पुष्ट, धार्मिक, रोग रहित, दुर्भिक्ष भय से पृथक् थे तथा कोई भी पुत्र-मरण को न देखते थे, स्त्रियाँ अविधवा और पतिव्रता थीं, अग्नि का भय न था, न ही प्राणी जल में डूबकर मरते थे। वायु का भय भी न था, और न ज्वर का भय था; भुखमरी तथा चोरी का भय न था। नगर और राष्ट्र धन-धान्य से युक्त थे तथा सब लोग आनन्द में थे जैसे कृतयुग में होने चाहिये।

कैकेयी

रामायण में कैकेयी एक प्रधान पात्र है, समस्त रामायण या रामचरित का यही अभिनायक या अभिरूपक है। कैकेयी को रामायण का अतिनिकृष्ट पात्र माना जाता है। कैकेयी बड़ी दुष्टा, अतिदोषी और अपराधिनी थी ऐसा आबाल वृद्ध के मुखाग्र पर रहता है। परन्तु हमारा निर्णय इसके सर्वथा विपरीत है। कैकेयी दुष्टा, अतिदोषी या अपराधिनी नहीं थी यह हम स्वकल्पना से नहीं किन्तु वाल्मीकि रामायण के वचनों द्वारा स्पष्ट करते हैं।

जब कि राम के राज्याभिषेक की घोषणा हुई, कैकेयी की दासी मन्थरा कुब्जा (कुबड़ी) उसे सुन और आभार-संभार को देखकर कैकेयी को कहती है कि—

उत्तिष्ठ मूढे किं शेषे भयं त्वामभिवर्तते।
उग्रत्वं राजधर्माणां कथं देवि न बुध्यसे॥

(वा० रा० अयो० 7।14, 23)

हे मूढ़ कैकेयी! उठ क्या सोती है, तुम्हारे ऊपर भय आ पड़ा, तुम राजधर्मों की उग्रता को क्यों नहीं समझती?

पुनः—

अपवाह्य तु दुष्टात्मा भरतं तव बन्धुषु।
कल्ये स्थापयिता रामं राज्ये निहतकण्टके॥

(वा० रा० अयो० 7।21)

दुष्ट दशरथ भरत को तेरे पिता आदि के यहाँ निकाल कर प्रातः ही राम को निष्कण्टक राज्य में स्थापित कर देगा।

इतने रहस्यमय कटु शब्दों का उत्तर कैकेयी क्या देती है, यह देखिये—

दत्त्वा त्वाभरणं तस्यै कुब्जायै प्रमदोत्तमा।
कैकेयी मन्थरां दृष्ट्वा पुनरब्रवीदिदम्।।
इदं तु मन्थरे मह्यमाख्यातं परमं प्रियम्।
एतन्मे प्रियमाख्यातं किंवा भूयः करोमि ते।।
रामे वा भरते वाहं विशेषं नोपलक्षये।
तस्मात्तुष्टास्मि यद्राजा रामभिषेक्ष्यति।।

(वा० रा० अयो० 8।33-35)

कैकेयी उक्त बात सुन उस कुब्जा मन्थरा को आभूषण पारितोषिकरूप में देकर कहने लगी कि हे मन्थरा! तुमने यह मुझे परम प्रिय बात सुनाई कि राम का कल राज्याभिषेक होगा, बोल, यह जो तूने प्रिय संवाद सुनाया इसके लिये मैं तुम्हें और क्या दूं? राम में या भरत मे मैं भेद नहीं देखती हूँ, भरत को राज्य मिला या राम को राज्य मिला, एक ही बात है, अतः मैं प्रसन्न हूँ कि दशरथ राम का अभिषेक करेंगे।

तथा—

धर्मज्ञो गुणवान् दान्तःकृतज्ञःसत्यवान्शुचिः।
रामो राजसुतो ज्येष्ठो यौवराज्यमतोऽर्हति।।
किमिदं परितप्यसे। यथावै भरतो मान्यस्तथा भूयोऽपि राघवः।
कौशल्यातोऽतिरिक्तं च स तु शुश्रूषते हि माम्।।

(वा० रा० अयो० 8।14-18)

हे मन्थरा! राम धर्मज्ञ है, गुणवान् है, जितेन्द्रिय है, कृतज्ञ, सत्यवादी और पवित्र है। राजा का ज्येष्ठ पुत्र है अतः यौवराज्य को प्राप्त करने योग्य है, तू क्यों दुःखी हो रही है जैसा ही मुझे भरत मान्य है उस से भी अधिक राम मान्य है, राम तो कौशल्या से भी अधिक मेरी सेवाशुश्रूषा करता है।

इस प्रकार कैकेयी का सदुत्तर होते हुए कैकेयी दुष्टा थी यह कहना मिथ्या ही है। गोस्वामी तुलसीदास ने कैकेयी को

दुष्टा कहते हुए 'ढोल गँवार पशु और नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी' जैसे शब्द कहकर स्त्री-जाति का बड़ा अपमान किया है। अस्तु, कैकेयी के विचारों में परिवर्तन हुआ जब कि मन्थरा ने निम्न वचन कहे-

अनर्थदर्शिनो मौर्ख्यान्नात्मानमवबुध्यसे।
शोकव्यसनविस्तीर्णे मज्जन्तो दुःखसागरे।।
भविता राघवो राजा राघवस्य च यः सुतः।
राजवंशात्तु भरतः कैकेयि परिहास्यते।।
ध्रुवं तु भरतं रामः प्राप्य राज्यमकण्टकम्।
देशान्तरं नाययिता लोकान्तरमथापि वा।।

(वा० रा० अयो० 8।21-23, 27)

हे महादुःखभरे समुद्र में भी डूबती हुई अनर्थदर्शिनी कैकेयी! तू मूर्खता से अपने आपको नहीं समझती है। देख, राम राजा बन जाएगा, फिर राम का पुत्र बनेगा, भरत तो राजवंश से छूट जाएगा हट जाएगा, और यह भी निश्चित है कि जब राम निष्कण्टक राज्य प्राप्त कर लेगा तो वह भरत को किसी दूसरे देश में, बस चला तो लोकान्तर में पहुँचा देगा।

अब प्रश्न यह है कि जब कैकेयी इतनी धार्मिक थी तो मन्थरा के इस प्रकार "राम राजा बन गया तो फिर उसके पश्चात् राम का पुत्र राजा बनेगा, भरत तो राजवंश से त्यक्त हो जाएगा और भरत को किसी दूसरे देश आदि में निकाल देगा" सुझाने पर भरत को राज्य दिलाने की कैकेयी को क्यों सूझी जब कि राज्यसिंहासन पर बैठने का अधिकार राम का था, क्योंकि राम ही दशरथ का ज्येष्ठ पुत्र था। इसमें कुछ रहस्य है, जो कि कैकेयी के पूर्व कहे हुए उदारवचनों में झलकता है। कैकेयी ने कहा कि मैं राम और भरत में भेद

नहीं देखती, 'राम राजा बना तो क्या और भरत राजा बना तो क्या' भरत के भी राजा बनने का कोई कारण होगा ही तभी तो कैकेयी का ऐसा कहना सार्थक है, वह कारण यह है कि कैकेयी के पिता ने उसका विवाह दशरथ के साथ पणबन्ध (शर्त) से किया था कि कैकेयी से जो पुत्र उत्पन्न होगा वह राज-सिंहासन पर बैठेगा अर्थात् वह राज्य का स्वामी बनेगा। अब इसके सम्बन्ध में रामायण से प्रमाण लीजिये—

सुहृदश्चाप्रमत्तास्त्वां रक्षन्त्वद्य समन्ततः।
भवन्ति बहुविघ्नानि कार्याण्येव विधानि हि॥
विप्रोषितश्च भरतो यावदेव पुरादितः।
तावदेवाभिषेकस्ते प्राप्तकालो मतो मम॥

(वा० रा० अयो० 4।25-25)

दशरथ कहते हैं कि हे राम! आज (इस समय) वह अवसर है जब कि तेरे मित्र हैं, जन तेरे पक्ष के हैं वे तेरी सब प्रकार से रक्षा करेंगे और ऐसे कार्यों में बहुत विघ्न होते हैं। भरत जब यहाँ से बाहर (नाना के यहाँ) गया हुआ है तभी तक तेरे राज्याभिषेक का अवसर है।

इस वचन में भरत के बाहर रहते हुए ही राज्याभिषेक का अवसर बतलाना भरत का अधिकार पणबन्ध के कारण राज्य पाने का अवश्य है यह सूचित करना है।

तथा—

वत्स राम चिरंजीव हतास्ते परिपंथिनः।
ज्ञातीन् मे त्वं श्रिया युक्तः सुमित्रायाश्च नन्दय॥

(वा० रा० अयो० 4।39)

कौशल्या राम को कहती है कि हे राम! तू चिरंजीवी हो, तेरे परिपन्थी जन हत हो गये—परास्त हो गये, तू मेरे परिवार को और सुमित्रा के परिवार को राज्यलक्ष्मी से युक्त हुआ

आनन्दित कर।

यहाँ 'तेरे विपक्ष के परास्त हो गये' उक्त कथन में भरत ही विपक्ष का लक्षित होता है। तथा 'मेरे परिवार और सुमित्रा के परिवार को आनन्दित कर इस कथन में कैकेयी के परिवार को छोड़ देना स्पष्ट दर्शा रहा है कि भरत दूसरे पक्ष में राज्य का अधिकारी है। जो लोग कैकेयी को दुष्टा कहते हैं वे लोग कौशल्या के उक्त वचन पर ध्यान दें, कहाँ कौशल्या के ये संकुचित वचन और कहाँ कैकेयी के उदारतापूर्ण वे वचन कि राम और भरत में मैं भेद नहीं देखती जो राम का राज्याभिषेक किया जा रहा है। कैकेयी अपने पुत्र का अधिकार समझती थी पर उदार होने से उसने ऐसा कहा था।

अब राम के मुख से भी स्पष्ट सुनिये कि कैकेयी का विवाह उसके पुत्र को राज्य मिलने के पणबन्ध से हुआ था। चित्रकूट पर्वत पर राम को मनाने जब भरत चलते हैं तब उन्हें अयोध्या वापिस चलने के लिये आग्रह करते हैं परन्तु राम ने निम्न वचन कहे जिससे भरत को निरुत्तर होकर लौटना पड़ा–

पुरा भ्रातः पिता नः स मातरं ते समुद्वहन्।
मातामहे समाश्रौषीद्राज्यशुल्कमनुत्तमम्।।

(वा० रा० अयो० 107।3)

हे भरत भाई! तेरी माता के साथ विवाह करते हुए हमारे पिता ने नाना के प्रति पहिले ही राज्यशुल्क की प्रतिज्ञा की थी।

अब सर्वथा स्पष्ट हो गया कि कैकेयी के साथ दशरथ का विवाह उससे उत्पन्न हुए पुत्र को राज्य पाने का था। यदि कैकेयी ने अपने पुत्र के अधिकार को पाने के लिये यत्न

किया तो क्या वह दुष्टा कही जाए? नहीं, नहीं। कौशल्या ने भी तो राम के राज्य पाने में प्रसन्नता दर्शाई थी और कैकेयी के प्रति उपेक्षा। राम भी तो राज्य लेने को तुरन्त तैयार हो गया था और फिर उसने भी तो भरत के प्रति उपेक्षा दर्शाई थी।

लक्ष्मणेमां मया सार्द्धं प्रशाधि त्वं वसुन्धराम्।

(वा० रा० अयो० 4।43)

'हे लक्ष्मण! तू मेरे साथ इस पृथिवी का शासन कर।'

लक्ष्मण राम के साथ रहता था और राम का आज्ञाकारी था अतएव राम ने उसे ऐसा कहा भरत की उपेक्षा करने से राम अपराधी है ऐसा नहीं कहा जा सकता, किन्तु ये सब राजनीति की बातें हैं। अब कैकेयी अपराधिनी और दुष्टा नहीं, उसने जो किया वह राजनीति और अपने अधिकार प्राप्ति के लिये किया। सुमित्रा भी अति नीतिमती थी, वह जानती थी कि ज्येष्ठ होने के कारण राज्य मिला तो राम को मिलेगा और पणबन्ध के कारण मिला तो भरत को मिलेगा, अतएव उसने एक पुत्र लक्ष्मण को राम का अनुचर बनाया और एक पुत्र शत्रुघ्न को भरत के साथ लगाया, किसी को भी राज्य मिले मेरा भी भाग कुछ होगा ही।

कौशल्या

राम की माता कौशल्या थी, इसका जीवन भी बड़ा धर्मपरायण था। वह प्राणायाम, सन्ध्या तथा हवन करती थी—

प्राणायामेन पुरुषं ध्यायमाना जनार्दनम्।

(वा० रा० अयो० 4।33)

कौशल्या प्राणायाम के साथ परमात्मा का ध्यान भी करती थी।

तथा—

सा क्षौमवसना हृष्टा नित्य व्रतपरायणा।
अग्निं जुहोति स्म तदा मन्त्रवत्कृतमङ्गला।।

(वा० रा० अयो०)

वह कौशल्या रेशमी वस्त्र पहिने हुए नित्य व्रतपरायण मन्त्रसहित हवन करती थी।

सुमित्रा

ज्येष्ठ भ्राता अनुकारी एवं अनुचर होना भी एक मर्यादा है। सुमित्रा ने अपने दोनों पुत्रों-लक्ष्मण और शत्रुघ्न को ज्येष्ठ भ्राता के अनुचर रूप में समर्पण कर दिया था। अर्थात् लक्ष्मण को राम के और शत्रुघ्न को भरत के सुपुर्द कर दिया था। राम को वनवास मिला तो लक्ष्मण को भी सुमित्रा वनवास में साथ जाने के लिये आदेश देती है–

सृष्टस्त्वं वनवासाय स्वनुरक्तः सुहृज्जने।
रामे प्रामदं माकार्षीः पुत्र भ्रातरि गच्छति।।
व्यसनी वा समृद्धो वा गतिरेषा तवानघ।
एष लोके सतां धर्मो यज्ज्येष्ठवशगो भवेत्।।
इदं हि वृत्तमुचितं कुलस्यास्य सनातनम्।
रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम्।।
अयोध्यामटवीं विद्धि गच्छ तात यथासुखम्।।

(वा० रा० अयो० 40।5-9)

हे लक्ष्मण! तू वनवास के लिए सृजा गया (ईश्वर ने सृजा या सुमित्रा द्वारा प्रेरित किया हुआ) है। राम से भली भाँति अनुरक्त रहना, भ्राता राम के वनवास जाते समय तू प्रमाद मत करना, चाहे वह सुखी हो या दुःखी हो, उसके साथ रहना यही तेरी गति है। यही सत्पुरुषों का धर्म है कि ज्येष्ठ भ्राता का अनुचर होना। यही इस कुल का उचित सनातन आचरण है। राम को तू दशरथ के स्थान में और सीता को मेरे स्थान में समझना, जङ्गल वनी को अयोध्या जानना, अतः हे पुत्र! तू सहर्ष राम के साथ जा।

रावण

रावण भी रामायण का एक विशेष पात्र है और वह राम के विपक्ष का प्रधान पात्र है। रावण के सम्बन्ध में बतलाने से पूर्व एक बात पर प्रथम विचार करना है वह यह कि किन्हीं विद्वान् का कथन है कि चैत्र कृष्ण चतुर्दशी को रावण का वध अर्थात् राम की विजय हुई न कि आश्विन शुक्ला दशमी को जो कि प्रचलित रूप से माना जाता है, क्योंकि पद्मपुराण में चैत्र कृष्ण चतुर्दशी तक युद्ध चला, राम के साथ लड़ते रावण का वध अठारहवें दिन हुआ पुनः अमावस्या को रावण आदि का दाह संस्कार किया गया, ऐसा लिखा है—

अष्टादशदिने रामो रावणं द्वैरथेऽवधीत्।
संग्रामे तुमुले जाते रामो जयमवाप्तवान्॥
माघशुक्लतृतीयायाश्चैत्र-कृष्ण चतुर्दशी।
सप्ताशीतिदिनान्येव मध्यं पञ्चदशाहकम्।
युद्धावहाराः संग्रामं द्वासप्ततिदिनान्यभूत्॥
संस्कारो रावणदीनामावास्या दिनेऽभवत्।

(पद्मपुराण पाताल खण्ड अ० 36।38, 39)

उक्त कथन ठीक नहीं, क्योंकि वाल्मीकि रामायण के विरुद्ध है। वाल्मीकि रामायण में कृष्णपक्ष अमावस्या को तो रावण युद्ध के लिये चला था फिर कृष्णपक्ष चतुर्दशी को वध कैसे? और अमावस्या को दाहसंस्कार कैसे?—

अभ्युत्थानं त्वमद्यैव कृष्णपक्षचतुर्दशी।
कृत्वा निर्याह्यमावस्यां विजयाय बलैर्वृतः॥
भवद्भिः श्वो निहंतास्मि रामं लोकस्य पश्यतः।

(वा० रा० युद्ध० 92।64, 93।5)

रावण को मन्त्रिजन कहते हैं कि आज कृष्णपक्ष चतुर्दशी है, आज तैयारी करके कल अमावस्या को सैन्य बल के साथ विजय के लिए निकलना। रावण ने भी कहा कि 'ठीक है, कल मैं आप लोगों के सहाय से राम का हनन करूँगा।'

यदि यहाँ यह कहा जाए कि अगले मास की कृष्णपक्ष चतुर्दशी को रावण का वध और अमावस्या को उसका दाहसंस्कार मान लिया जाए तो वाल्मीकि रामायण से विरोध न पड़ेगा, परन्तु यह कल्पना ठीक नहीं बैठती, कारण कि पद्मपुराण में रावण का वध उसके साथ लड़ते हुए राम ने 18वें दिन किया ऐसा कहा और इस कल्पना से 29वें दिन राम के साथ लड़ते हुए रावण का वध बैठता है, तथा समस्त युद्धकाल 72 दिन हुआ, इन्द्रजित् जैसे कूट योद्धाओं के साथ केवल 43 दिन युद्ध हुआ और अकेले रावण के साथ 29 दिन युद्ध चला यह बात भी अश्रद्धेय है। पद्मपुराण में लिखा इसलिए प्रमाण मानना चाहिये यह कोई आवश्यक नहीं है। पुराण सर्वथा माननीय हैं ऐसा नहीं कहा जा सकता। और फिर इसलिए भी प्रमाण नहीं कि पद्मपुराण रामायण–बाह्य है, यदि रामायण–बाह्य बात मानना है तो आश्विन–शुक्ला दशमी को राम ने विजय प्राप्त किया है यह 'श्री हरिभक्ति विलास' में लिखा है–

सीता दृष्टेति हनुमद्वाक्यं श्रुत्वाऽकरोत् प्रभुः।
विजयं वानरैःसार्द्ध वासरऽस्मिन् शमीतलात्॥
आश्विनस्य सिते पक्षे दशम्यां विजयोत्सवः।

(श्री हरिभक्ति विलास, विशाल 15)

'सीता मैंने देखी' हनुमान् के इस कथन पर राम ने वानरों के साथ इस दिन विजय किया जो कि आश्विन मास

के शुक्लपक्ष की दशमी को विजयोत्सव दिन है।

उक्त कथन वाल्मीकि रामायण के साथ संगत भी होता है कारण कि रावण के दश शिर थे और वह युद्ध के लिए कृष्णपक्ष अमावस्या को चला, रावण के दशों शिरों को बारी-बारी से एक-एक दिन काटने से दशवाँ शिर दशवें दिन कटने से शुक्लपक्ष की दशमी को रावण का वध सिद्ध हो जाता है।

रावण के दश शिरों का रहस्य–

रावण के दश शिर होने की चर्चा रामायण में आती है, साथ में राम जिस शिर को वाण से काट देता था पुनः उसके स्थान पर दूसरा शिर उभर आता था यह भी वर्णन आता है–

सन्धाय धनुषा रामः शरमाशीविषोपसम्।
रावणस्य शिरोऽच्छिन्दच्छ्रीमज्ज्वलितकुण्डलम्॥
तच्छिरः पतितं भूमौ दृष्टं लोकैस्त्रिभिस्तदा।
तस्य सदृशं चान्यद्रावणस्योत्थितं शिरः॥

(वा० रा० युद्ध० 107, 54, 56)

राम ने सर्पविष के सदृश वाण को धनुष पर चढ़ा कर रावण के शिर को काट डाला, वह शिर भूमि पर गिरा हुआ सबने देखा, पुनः उसी के सदृश दूसरा शिर उसके स्थान पर ऊपर उभर आया।

अब यहाँ विचारना चाहिए कि जन्म का अंग कट जाने पर पुनः उसके स्थान पर दूसरा उत्पन्न नहीं हो सकता, हाथ कट जाये तो पुनः हाथ नहीं उत्पन्न हो सकता, एवं पैर या शिर कट जाने पर भी वह पुनः उत्पन्न नहीं हो सकता। इससे सिद्ध होता है कि रावण के दश शिर जन्म के नहीं थे, जन्म के होते तो उनके कट जाने पर पुनः उत्पन्न न होते। और भी रामायण के वचन में शिर के कट जाने पर उसके स्थान पर

दूसरा उत्पन्न हो गया ऐसा शब्द भी न होकर शिर 'उत्थितं' ऊपर उभर आया। अतः रावण के दश शिर कृत्रिम अर्थात् बनावटी थे यही समझना चाहिए। रावण आदि मायावी माया करने वाले अर्थात् ऐन्द्रजालिक थे यह तो रामायण में स्थान-स्थान पर बतलाया ही है। इनके द्वारा माया अर्थात् जादू (शोब्दा) करना भी रामायण में आता ही है। मारीच मायिक मृग बना था, चाँदी के बिन्दुओं से युक्त सुनहरी शरीर उसका बनाया गया था यह भी कहा गया है[1]। रावण ने लंका में राम का बनावटी शिर कटा हुआ सीता के सम्मुख रखा था इस शिर को मधुजिह्व राक्षस ने बनाया था[2]। इन्द्रजित् ने बनावटी सीता संग्राम में राम के सम्मुख वध किया ही था[3]। इसी प्रकार रावण के दश शिर भी बनावटी थे,

1. **सौवर्णस्त्वं भूत्वा चित्रो रजतविन्दुभिः।**
आश्रमे तस्य रामस्य सीतायाः प्रमुखे चर।।

(वा० रा० अरण्य० 35।18)

हे मारीच, तू सुनहरी चित्र मृग चाँदी के बिन्दुओं से युक्त होकर राम के आश्रम पर सीता के सम्मुख विचर।

2. **मोहयिष्यावहे सीतां मायया जनकात्मजाम्।**
शिरो मायामयं गृह्य राघवस्य निशाचर।।

(वा० रा० युद्ध० 81।8)

अर्थात्-हे मधुजिह्व! तू राम का मायामय कटा शिर तैयार करके ला उससे हम सीता को धोखा देंगे।

3. **इन्द्रजित् तु रथे स्थाप्य सीतां मायामयीं तथा।**
बलेन महताकृष्य तस्या वधमरोचयत्।।

(वा० रा० युद्ध० 231।8)

इन्द्रजित् ने मायामयी (बनावटी) सीता को रथ में बिठा उसका वध किया।

यह माना जा सकता है। युद्धकाल में शत्रु को धोखा देने के लिए ऐसा प्रयोग किया होगा[1] कि शत्रु वास्तविक शिर को न काट सके जो कि उनके नीचे छिपा रहता था जिसके काटने का भेद विभीषण ने राम को बतलाया था। वे कृत्रिम शिर रबर और स्प्रिंग के बने हुए होंगे जिससे एक के कट जाने पर दूसरा उसके स्थान पर ऊपर उभर आता था, बस यह है रावण के दश शिर होने का रहस्य।

रावण का वंश–

रावण पौलत्स्यवंशज था–

पौलस्त्यवंशप्रभवो रावणो नाम राक्षसः।

(वा० रा० बाल० 20।16)

राक्षसेन्द्रं महाभागं पौलस्त्यकुलनन्दनम्।
रावणं शत्रुहन्तारं मन्त्रिभिः परिवारितम्।।

(वा० रा० अरण्य० 32।33)

अर्थं वा यदि वा कामं शिष्यः शास्त्रेष्वनागतम्।
व्यवस्यन्ति न राजानो धर्मं पौलस्त्यनन्दन।।

(वा० रा० अरण्य० 50।8)

स्वयं रक्षोऽधिपश्चापि पौलस्त्यो देवकण्कटकः।

(वा० रा० युद्ध० 60।77)

इन वचनों में रावण को 'पौलत्स्यवंशप्रभव, पौलत्स्य-कुलनन्दन, पौलत्स्यनन्दन, पौलत्स्य' कहा है।

रावण वेदविद्याव्रतस्नातक था–

वेदविद्याव्रतस्नातः स्वकर्मनिरतस्तथा।
स्त्रियः कस्माद् वधं वीर मन्यसे रक्षसेश्वर।

(वा० रा० सुन्दर० 92।62)

---

1. योरोप के युद्ध में जर्मनी के हिटलर ने भी अपनी शक्ल के 10 हिटलर बना रखे थे।

हे रावण! तू वेदविद्याव्रतस्नातक तथा स्वकर्म-परायण होकर स्त्रीवध (सीता का वध) क्यों करना चाहता है?

रावण को आर्यपुत्र भी कहा गया है-

आर्यपुत्रेतिवादिन्यो ह नाथेति च सर्वशः।
परिपेतुः कबन्धाङ्कां महीं शोणितकर्दमाम्॥

(वा० रा० युद्ध० 110।4)

रावण की स्त्रियाँ उसका वध हो जाने पर विलाप करते हैं उनमें से कुछेक 'आर्यपुत्र' ऐसा कहकर और कुछेक 'नाथ' ऐसा कहकर उसकी रक्तभरी शवभूमि पर गिर पड़ीं।

रावण दुष्ट था, पापी था इसमें सन्देह नहीं, पर राम के सन्मुख या राम की तुलना में ही उसे दुष्ट या पापी कह सकते हैं, किन्तु स्वतन्त्रता से पूर्व के अनेक राजा-महाराजाओं व आजकल के अनेक नेताओं से वह बहुत ऊँचा था, श्रेष्ठ था। उन में अनेक शिष्टाचार और मर्यादाएँ ऊँची तथा आदर्श वाली पाई जाती हैं जिनका उल्लेख हम यहाँ संक्षेप में करते हैं।

स्त्री के सम्मुख नीचे शिर करके बात करना-

तामुवाच दशग्रीवः सीतां परमदुःखताम्।
अवाक्शिराः प्रपतितो बहु मन्यस्व मामिति॥

(वा० रा० सुन्दर० 18।67)

रावण नीचे शिर करके तथा साष्टाङ्ग सा झुककर सीता को बोला कि मुझे बहुत अच्छा मान।

सीता को एक वर्ष की अवधि देना-

सा तु संवत्सरं कालं मामयाचत भामिनी।
प्रतीक्षमाणा भर्तारं राममायतलोचना॥

(वा० रा० युद्ध० 12।19)

'उस सीता ने एक वर्ष की अवधि अपने पति राम की

प्रतीक्षा के लिये मुझ से माँगी है' ऐसा रावण ने अपने मन्त्रियों से कहा।

हस्तगत सीता को उसकी इच्छा के अनुसार राम की प्रतीक्षार्थ एक वर्ष की अवधि रावण का देना उसके शिष्टाचार और श्रेष्ठ व्यवहार को दर्शाता है।

रावण की महती मर्यादावत्ता–

एवं चैतदकामां त्वां न च स्प्रक्ष्यामि मैथिलि॥

(वा० रा० सुन्दर० 20।6)

रावण सीता को कहता है कि हे सीता! यदि तू मेरे प्रति काम भाव नहीं रखती है तो मैं तुझे स्पर्श नहीं कर सकता।

धर्मशास्त्रों में वन्ध्या, रजस्वला, अकामा आदि स्त्री को स्पर्श करने का निषेध है, अतः अपने प्रति अकामा सीता को स्पर्श न करने की इस मर्यादा का रावण ने आचरण किया, यह रावण की भारी मर्यादावत्ता है जिससे वह स्वतन्त्रता से पूर्व के अनेक राजाओं–महाराजाओं से भी श्रेष्ठ और मर्यादावान् ठहरता है।

रावण में गुण अनेक थे केवल अधर्म बलवान् था, यह राम के मुख से भी सुनें–

अहोरूपमहो धैर्यमहो कान्तिरहो द्युतिः।
अहो राक्षसराजस्य सर्वलक्षणयुक्तता॥
यद्यधर्मो न बलवान् स्यादयं राक्षसेश्वरः।
स्यादयं सुरलोकस्य सशक्रस्यपि रक्षिता॥

(वा० रा० सुन्दर० 49।18)

रावण को देखते ही राम मुग्ध हो जाते हैं और कहते हैं अहो रावण का रूप सौन्दर्य, अहो धैर्य, अहो कान्ति, अहो सर्वलक्षणयुक्त होना। यदि इसमें अधर्म बलवान् न होता तो यह इन्द्र सहित देवलोक का भी स्वामी बन जाता।

रावण में अधर्म विषयक जो दोष थे उनका परिगणन रावण की पत्नी मन्दोदरी उसके वध पर विलाप करती हुई कहती है–

नैकयज्ञविलोप्तारं, धर्मव्यवस्थाभेत्तारं।
देवासुरनृकन्यानामाहर्तारं ततस्ततः॥

(वा० रा० युद्ध० 111।51)

अनेक यज्ञों के विलोप करने वाले, धर्मव्यवस्थाओं के तोड़ने वाले, देव असुर मनुष्यों की कन्याओं के जहाँ-तहाँ से हरण करने वाले, आज तू अपने इन पाप कर्मों से वध को प्राप्त हुआ।

राम

रामायण में राम प्रमुख सत्पात्र है, राम का जीवन अत्यन्त आदर्श था। राम के जीवन से बहुत शिक्षा मिलती है। राम के जीवन की महत्ता प्रदर्शित करने से पूर्व राम के ऊपर किए जाने वाले कुछ आक्षेपों का विचार करते हैं।

१. राम ने शूर्पणखा के नाक-कान कटवा दिये। यह राम ने स्त्री पर प्रहार किया जो ठीक नहीं, मर्यादा के विरुद्ध है।

२. राम ने वन जंगलों में मृग अर्थात् हरिण जैसे दयनीय प्राणियों का वध किया, इससे उनकी हिंसा करना और मांस खाना दोनों दोष सिद्ध होते हैं जो कि उनकी महापुरुषता में अश्रद्धा कराते हैं।

विचारः-

1. राम राजकुमार थे, यह राजधर्म की बात है कि यदि स्त्री पापवश दण्डनीय हो तो उसे अवश्य दण्ड दे, देखिये विश्वामित्र ऋषि ने ताटका-वध के लिये राम को क्या आदेश दिया है-

नहि ते स्त्रीवधकृते घृणा कार्या नरोत्तम्।
चातुर्वर्ण्य-हितार्थं हि कर्त्तव्यं राजसूनुना।।

(वा० रा० बाल० 25।17)

हे राम! तुझे स्त्री वध में घृणा न करनी चाहिए, चातुर्वर्ण्य के हितार्थ स्त्री वध भी राजपुत्र का कर्त्तव्य है, क्योंकि-

नृशंसमनृशंसं वा प्रजारक्षण-कारणात्।
पातकं वा सदोषं वा कर्तव्यं रक्षता सदा।।
राज्यभार-नियुक्तानामेष धर्मः सनातनः।
अधर्म्यां जहि काकुत्स्थ धर्मो ह्यस्यां न विद्यते।।
श्रूयते हि पुरा शक्रो विरोचनसुतां नृप।
पृथिवीं हन्तुमिच्छन्तीं मन्थरामभ्यसूदयत्।।

विष्णुना च पुरा च राम भृगुपत्नी पतिव्रता।
अनिन्द्रं लौकमिच्छन्ती काव्यमाता निषूदिता॥
एतैश्चान्यैश्च बहुभिः राजपुत्रैर्महात्मभिः।
अधर्मसहिता नार्यो हताः पुरुषसत्तम॥
तस्मादेतां घृणां त्यक्त्वा जहि मच्छासनान्नृपः।

(वा० रा० बाल० 25।18-22)

चाहें हिंसा कर्म समझा जाए या अहिंसा कर्म समझा जाए, पातक हो या दोषयुक्त हो परन्तु प्रजारक्षण के कारण राज्य संचालकों को ऐसा करना चाहिये, यह सनातन धर्म है। हे राम! यह ताटका पापिनी है इसमें धर्म नहीं है अतः इसका वध कर। इस प्रकार दुष्टा पापिनी स्त्रियों का वध पुराकाल में पुरातन राजपुत्रों (राजाओं) ने भी किया है। इन्द्र ने पृथिवी को नष्ट करना चाहती हुई विरोचन-पुत्री मन्थरा का हनन किया। विष्णु ने अनिन्द्रता चाहती हुई भृगुपत्नी काव्यमाता का हनन किया। इसी प्रकार अनेक महात्मा राजाओं ने भी अधर्म सहित स्त्रियों का वध किया। अतः इस घृणा को छोड़ मेरे आदेश से इस ताटका को मार।

2. दूसरा आक्षेप कि राम ने वन जङ्गलों में मृग अर्थात् हरिण जैसे दयनीय प्राणियों का वध किया है। इसके सम्बन्ध में वक्तव्य है कि राम ने मृग मारे यह ठीक है परन्तु मृग का अर्थ हरिण ही लेना उचित नहीं, क्योंकि मृग का अर्थ सिंह आदि जङ्गली पशु है इस विषय में प्रमाण देते हैं-

1. मैं जब सर्वप्रथम पर्वतयात्रा में गया तो धर्मशाला स्थान में (कांगड़ा जिला में) पहुँचा तो वहाँ मुझे कहा गया कि आप ऊपर वाली सड़क पर न जाना, क्योंकि उधर मृग आ गया है। पता चला कि ये लोग चीते को मृग कहते हैं।

2. सिंह आदि जङ्गली पशुओं के शिकार करने को

'मृगया' कहते हैं इससे भी मृग का अर्थ सिंह आदि जङ्गली पशु है।

3. संस्कृत साहित्य में सिंह को 'मृगेन्द्र' कहते हैं जैसे 'नरेन्द्र' का अर्थ जो नरों में नर राजा है वह नरेन्द्र है एवं जो मृगों के मध्य मृग राजा है वह मृगेन्द्र सिंह भी मृग है। अतः मृग का अर्थ सिंह आदि जङ्गली पशु है।

4. वेद में भी मृग का अर्थ सिंह आदि जङ्गली पशु का आता है "मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठः"।

यहाँ मृग के समान भयङ्कर ऐसा कहना दयनीय हरिण का सूचक नहीं, अपितु सिंह जैसे भयङ्कर पशु के ही अर्थ में है।

5. रामायण की अन्तःसाक्षी भी मृग के अर्थ सिंह आदि जङ्गली पशु आदि के सम्बन्ध में लीजिये–

इदं दुर्गं हि कान्तारं मृग-राक्षससेवितम्।
सीतां च तात रक्षिष्ये त्वयि यति सलक्ष्मणे॥

(वा० रा० अरण्य० 14।33)

जटायु राम से कहता है कि हे राम! यह दुर्गम्य वन मृग राक्षसों से भरा है, आश्रम से लक्ष्मण सहित आपके बाहर चले जाने पर मैं सीता की रक्षा करूँगा। यहाँ राक्षसों के साथ मृग का होना तथा उससे सीता की रक्षा का प्रसंग आना मृग का अर्थ सिंह आदि जंगली पशु सिद्ध करता है।

तथा–

दीप्तजिह्वो महाकायस्तीक्ष्णद्रंष्ट्रो महाबलः।
व्यचरं दण्डकारण्यं मांसभक्षो महामृगः॥

(वा० रा० अरण्य० 39।3)

मारीच ने अपना मायिका मृग का रूप कैसा बनाया था यह वर्णन है कि लपलपाती हुई जिह्वावाला, बड़े शरीरवाला,

तीक्ष्ण दाँतों वाला, महाबलवान्, मांसभक्षक, महामृग बनकर दण्डकारण्य में विचरता था।

उक्त वचन में समस्त विशेषण मृग का अर्थ सिंह जैसा जङ्गली पशु है यह सिद्ध करता है।

मृग सम्बन्धी इस समस्त विवेचन से यह सिद्ध होता है कि यदि राम ने मृग मारे तो सिंह आदि जङ्गली पशु मारे यह स्पष्ट हो जाता है।

अब रही राम के मांस खाने की बात सो राम मांस नहीं खाते थे—

न राघवो मांसं भुङ्क्ते न चैव मधु सेवने॥

(वा० रा० सुन्दर० 36।41)

हनुमान सीता से कहता है कि राम न मांस खाता है और न मद्य पीता है।

राम ने हरिण जैसा दयनीय पशु मारा या वह मांस खाते थे यह सुतरां निराकृत हो गया। अस्तु, अब राम के गुणों के सम्बन्ध में देखिये।

राम की विद्वत्ता—

वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञः। (वा० रामा० बाल० 1।14)

राम वेदवेदाङ्ग का तत्त्ववेत्ता था।

सर्वविद्याव्रतस्नातो यथावत्साङ्गवेदवित्

(वा० रा० अयो० 1।20)

राम सर्वविद्याव्रतस्नातक तथा यथावत् अङ्गोंसहित वेद का जानने वाला था।

राम के सद्‌गुण—

क्षमा यस्मिंस्तपस्त्यागः सत्यं धर्मकृतज्ञता।
अप्यहिंसा च भूतानां तमृते का गतिर्मम॥

(वा० रा० अयो० 12।33)

दशरथ कहते हैं कि हे कैकेयी, जिस राम के अन्दर क्षमा, तप, त्याग, सत्य, धर्म और कृतज्ञता तथा प्राणियों के लिये दया है उस राम के बिना मेरी क्या गति होगी?

पिता की आज्ञापालनशीलता–

एताभ्यां धर्मशालाभ्यां वनं गच्छेति राघव!
मातापितृभ्यामुक्तोऽहं कथमन्यत्समाचरे॥

(वा० रा० अयो० 101।22)

राम कहते हैं कि इन धर्मशील मातापिता की आज्ञा वन में जाने की मुझे आज्ञा हुई, मैं उसे उल्लंघन कैसे कर सकता हूँ!

उदारता–

या प्रीतिर्बहुमानश्च यय्ययोध्यानिवासिनाम्।
मत्प्रियार्थं विशेषेण भरते सा विधीयते॥

(वा० रा० अयो० 43।7)

वनवास जाते हुए राम कहते हैं कि अयोध्यानिवासी आप लोगों की मेरे अन्दर जो प्रीति और बहुमानता है उसे मेरे प्रसन्न करने के लिये भरत में करो।

यह राम की अत्यन्त उदारता है कि जो राज्य को त्यागते हुए भरत का आदर अपने जैसा कराने को प्रजाजनों को आदेश देता है, अन्यथा राज्य छिन जाने पर दूसरे के हाथ में चले जाने पर ऐसी उदारता तो क्या दर्शना लोग प्रजाजनों को उलटा भड़काते हैं।

राम के गुण भरत की तुलना से–

इसमें सन्देह नहीं कि भरत भी एक उत्तम आदर्श था, परन्तु राम में ऐसे गुण भी थे जिनका भरत में अभाव है तथा भरत को भी शिक्षा देने वाले हैं।

तां प्रेक्ष्य भरतः क्रुद्धं शत्रुघ्नमब्रवीत्।
अवध्याः सर्वभूतानां प्रमदा क्षम्यतामिति।।
हन्यमानामिमां पापां कैकेयीं दुष्टचारिणीम्।
यदि मां धार्मिको रामो नासूयेन्मातृघातकम्।।
इमामपि हतां कुब्जां यदि जानाति राघवः।
त्वां च मां चैव धर्मात्म। नाभिभाषिष्यते ध्रुवम्।।

(वा० रा० अयो० 77।21-23)

कुब्जा को देख क्रुद्ध हुए शत्रुघ्न को भरत बोला कि स्त्रियाँ अवध्य हैं, नहीं तो मैं पापी दुष्टचारिणी माता कैकेयी को मार देता, यदि मुझे धार्मिक राम निन्दित न करे। राम यदि इस कुब्जा के भी मारने को सुन ले तो निश्चय तुझ से और मुझ से वह बोलेगा नहीं।

तथा–

न दोषं त्वयि पश्यामि सूक्ष्मप्यरिसूदन्।
न चापि जननीं बाल्यात्त्वं विगर्हितुमर्हसि।।

(वा० रा० अयो० 101।17)

राम कहते हैं– हे भरत! मैं तुम्हारा दोष नहीं समझता हूँ और न तू जननी (कैकेयी) की बालपन के कारण निन्दा कर सकता है।

भरत का त्याग कम नहीं है जो राम के मनाने के लिये चित्रकूट पर गया तथा नन्दीग्राम में वानप्रस्थ बनकर रहा, तथापि भरत राम जैसा योग्य नेता नहीं था, राजसभा और प्रजा का प्रेम राम से था, वे राम को चाहते थे जैसा कि राम के वचनों से दर्शाया गया कि मेरे प्रति जो प्रीति और बहुमानता तुम्हारी है वैसी भरत में रखना। भरत के मुख से भी राम के योग्य होने की बात सुनिये–

चरितब्रह्मचर्यस्य विद्यास्नातस्य धीमतः।
धर्मे प्रयतमानस्य को राज्यं मद्विधो हरेत्॥

(वा० रा० अयो० 82।11)

भरत कहता है कि ब्रह्मचर्य व्रत में पूर्ण विद्यास्नातक बुद्धिमान् तथा धर्माचरण में प्रयतमान राम के राज्य को कौन मेरे जैसा ले सकता है।

इस कथन में यह स्पष्ट है कि भरत अपने को राम की अपेक्षा राज्य चलाने में अयोग्य समझता है, इतना ही नहीं, लंकाविजय के पश्चात् लौटे हुए राम को राज्य-भार संचालन में अपने को असमर्थ प्रकट करता हुआ भरत कहता है–

धुरमेकाकिना न्यस्तां वृषभेण बलीयसा।
किशोरवद् गुरुं भारं नाहं वोढुमुत्सहे॥
गतिं खर इवाश्वस्य हंसस्येव वायसः।
नान्वेतुमुत्सहे वीर तव मार्गमरिन्दम॥

(वा० रा० युद्ध० 128।3, 5)

हे राम! शकट की धुरा को बलवान् वृषभ जैसे छोटे से बछड़े पर छोड़ दे तो उसे वहन न कर सके उसी प्रकार मैं असमर्थ इस राज्यभार का वहन नहीं कर सकता। जैसे अश्व की गति को गर्दभ और हंस की गति को कौआ प्राप्त नहीं हो सकता उसी भाँति आपके सम्मुख मेरी स्थिति है।

राम के गुण लक्ष्मण की तुलना से–

लक्ष्मण का त्याग और तपस्या भी आदर्श है जो घर छोड़ वनवास को राम के साथ चल दिया और अपनी धर्मपत्नी ऊर्मिला को साथ लिये बिना चल दिया। परन्तु राम में लक्ष्मण से भी अधिक अन्य गुण थे जिनके कारण वे लक्ष्मण के भी आदर्श थे जो संक्षेप में यहाँ दिये जाते हैं। उनकी तुलना करें प्रथम लक्ष्मण के विचार पुनः राम के

विचार देखें।

***लक्ष्मण के विचार*—**

भरतस्याथ पक्ष्यो वा यो वास्य हितमिच्छति।
सर्वांस्ताँश्च वधिष्यामि मृदुर्हि परिभूयते॥
प्रोत्साहितोऽयं कैकेय्या सन्तुष्टो यदि नः पिता।
अमित्रभूतो निःसङ्गं वध्यतां वध्यतामपि॥

(वा० रा० अयो० 11।11, 12)

लक्ष्मण राम को कहता है कि 'जो भरत के पक्ष का अथवा जो उसका हित चाहता है उन सब का मैं वध कर दूँगा, नरम रहना अच्छा नहीं, नरम दबाया जाता है। यदि हमारा पिता दशरथ भी कैकेयी द्वारा भड़काया हुआ असन्तुष्ट है तो वह वध करने योग्यों में होने से वध कर दिया जाए।'

इसी प्रकार चित्रकूट पर राम को पुनः अयोध्या लौटाने के लिये आते हुए भरत को देख लक्ष्मण वृक्ष पर चढ़ कर कहता है कि इस दुष्ट भरत को मैं मारूँगा, वन में आपकी हत्या के लिये आ रहा है। परन्तु राम तो आश्वासन ही देते हैं कि भरत मिलने के लिये आया है तू क्यों ऐसे विचार कर रहा है, भरत या पिता को मारना असत् और घृणित कार्य है।

पितुः सत्यं प्रतिश्रुत्य हत्वा भरतमाहवे।
किं करिष्यामि राज्येन सापवादेन लक्ष्मण॥
कथं नु पुत्राः पितरं हन्युः कस्यांचिदापदि।
भ्राता वा भ्रातरं हन्यात्सौमित्रे प्राणमात्मनः॥

(वा० रा० अयो० 97।3, 16)

हे लक्ष्मण! पिता के वचन सत्य करना मानकर संग्राम में भरत को मार कर अपवाद वाले राज्य का क्या करूँगा? किसी भी आपत्ति में पुत्र का पिता तथा भ्राता प्राणसदृश भ्राता का हनन कोई कैसे कर सकता है?

राम के गुण रावण की तुलना से–

राम की रावण से तुलना कहाँ हो सकती है, रावण वह व्यक्ति था जो राम की कुटिया से सीता को बलात् ले गया और राम वह व्यक्ति था जो निज स्थान पर आई रावण की बहन शूर्पणखा को देखना भी नहीं चाहता।

राम के विशेष गुण–

आस्तिको धर्मशीलश्च व्यवसायी च राघवः।

(वा० रा० किष्कि० 27।35)

राम आस्तिक, धार्मिक और निश्चयात्मक था। राम मर्यादावान् था।

रामो भामिनि लोकस्य चातुर्वर्ण्यस्य रक्षिता।
मर्यादानां च लोकस्य कर्ता कारयिता सः॥

(वा० रा० सुन्दर० 35।11)

हनुमान् सीता से कहता है कि हे सीता! राम लोक का और चातुर्वर्ण्य का रक्षक है तथा लोक की मर्यादाओं का स्वयं आचरण करने वाला और दूसरों से कराने वाला है।

शरणागत को अभयदान देना राम में–

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम॥
आनयैनं हरिश्रेष्ठ दत्तमस्याभयं मया।
विभीषणो वा सुग्रीवो वा यदि वा रावणः स्वयम्॥

(वा० रा० युद्ध० 18।34)

जब विभीषण राम की शरण में आता है तो उसे सुग्रीव आदि मार देना चाहते हैं, परन्तु राम ने कहा कि मैं शरणागत सब प्राणियों को अभय देता हूँ यह मेरा व्रत है इसलिये इस विभीषण को मारो नहीं, अपितु मेरे पास लाओ। मैंने इसको अभय दे दिया है। विभीषण ही क्या, चाहे सुग्रीव या रावण

भी क्यों न हों, बिना मारे ले आओ।

राम धर्मपरायण वेदवित् और अस्त्रवेत्ता था—

यस्मिन् न चलते धर्मो यो धर्मं नातिवर्तते।
यो ब्राह्ममस्त्रं वेद वेदान् वेदविदांवरः॥

(वा० रा० युद्ध० 28)

जिस राम में धर्म चलायमान नहीं होता, जो धर्म का अतिक्रमण नहीं करता, वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ है, वह ब्राह्म अस्त्र को जानता है।

स्वदेशीय स्वराज्य का संस्थापक राम—

राम ने लंकाविजय करके वहाँ स्वयं राज्य नहीं किया, किन्तु वहीं के निवासी रावण के भाई विभीषण को राज्य दे दिया, क्योंकि प्रत्येक देश में अपने देश का राजा होना चाहिये, दूसरे देश को पादाक्रान्त करना ठीक नहीं है। अपनी माता ही अपने बच्चे को उसकी प्रकृति के अनुसार, उसके पूर्णसुख को साध सकती है, पराई माता नहीं, अतः राम ने लंका को स्वतन्त्र करके अपने देश में ही राज्य किया।

रामराज्य का दृश्य—

न पर्यदेवन् विधवा न च व्यालकृतं भयम्।
न व्याधिजं भयं चासीद् रामे राज्यं प्रशासति॥
निर्दस्युरभवल्लोको नानर्थं कश्चिदस्पृशत्।
न च स्म वृद्धा बालानां प्रेतकार्याणि कुर्वते॥
सर्वं मुदितमेवासीत् सर्वो धर्मपरोऽभवत्।
राममेवानुपश्यन्तो नाभ्यहिंसन् परस्परम्॥
आसन् वर्षसहस्राणि तथा पुत्रसहस्रिणः।
निरामया विशोकाश्च रामे राज्यं प्रशासति॥

(वा० रा० युद्ध 128।98-101)

राम के प्रशासन में विधवाएँ न रोती थीं, हिंस्र प्राणी

का भी भय न था, व्याधि से उत्पन्न भय भी न था अर्थात् रोग भी अधिक नहीं सताते थे, प्रजाजन चोर, डाकुओं से रहित था, कोई किसी के प्रति अनर्थ या पाप नहीं करता था। बूढ़े बड़ों के सम्मुख बालकों का देहान्त नहीं होता था, सब प्रसन्न थे, सब धर्मपरायण थे, राम के देखते हुए परस्पर हिंसा नहीं करते थे, अनेक पुत्र-पौत्रों से युक्त वंश सहस्त्रों वर्षों तक चलते थे अर्थात् किसी का भी वंशच्छेदन न होता था, प्रजाजन रोग और शोक से अलग थे।

राष्ट्र में विधवाओं की वृद्धि, सिंह आदि का भय, चोर-डाकुओं का होना, व्यावहारिक अनर्थ, बालमृत्यु, परस्पर मारकाट, वंशच्छेदन आदि का कारण नेता राजा का अनुचित शासन है जो कि बाल-विवाह, वृद्धविवाह, जगलों का अनियन्त्रण, प्रजा की अरक्षा, चिकित्सा के लिये चिकित्सालयों तथा खानपान आदि की कमी दुर्व्यवस्थाओं के रूप में है।

राम का जीवन वेद के अनुसार था–

इन्द्र आसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिण यज्ञः पुर एतु सोमः।
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम्।।

यजु०

जिन सेनाओं का नेता इन्द्र अर्थात् विद्युत् जैसा शक्तिसम्पन्न हो, बृहस्पति अर्थात् पूर्ण विद्वान् हो, दक्षिण यज्ञ अर्थात् चतुर संगतिकारक हो, सोम अर्थात् गम्भीर हो तो उसकी तोड़ फोड़ करती हुई जय पाती हुई देवसेना-दिव्यसेनाओं के वीर आगे बढ़ते हैं।

राम इन्द्र था, विद्युत् की भाँति शक्तिसम्पन्न था तभी तो वह जङ्गली जाति के अन्दर वीरता भर सका, वह बृहस्पति अर्थात् पूर्ण विद्वान् था तभी तो विभीषण को न मारने देकर उसे जीवित बुलाया, उस विभीषण से ही इन्द्रजित द्वारा

कृत्रिम सीता के वध का भेद पाकर अपनी आत्महत्या से बच गया तथा विभीषण के आदेश से रावण के दश शिरों को छोड़ वक्षःस्थल में प्रहार कर रावण को मार सका। वह चतुर सङ्गतिकारक था तभी कार्य को साध सका। सोम, गम्भीर और शान्त भाव होने से ही वह विपत्ति को टाल निज साथियों को सँभाल सका। भारत को पुनः ऐसे नेता की आवश्यकता है। अस्तु।

यहाँ तक इस प्रस्तुत 'रामायण की विशेष शिक्षाएँ' का व्यक्तिचरित नामक पूर्वार्द्ध हुआ। अब आगे उत्तरार्द्ध में रामायण के अन्य सिद्धान्त, प्रथाएँ, कलाकौशल आदि पर प्रकाश डाला जायगा।

रामायण की विशेष शिक्षाएँ

(रामायण-दर्पण)

उत्तरार्द्ध

इसमें रामायण-काल के धार्मिक सिद्धान्त, प्रथाएँ, समाज, राष्ट्र, देश के व्यवहार, कला-कौशल आदि का वर्णन है।

रामायण के कुछ धार्मिक वर्णन

सन्ध्या, हवन आदि नित्य कर्म—

आश्वासितो लक्ष्मणेन रामः सन्ध्यामुपासत।

(वा० रा० युद्ध० 6।23)

सीता के शोक में ग्रस्त हुए राम ने लक्ष्मण द्वारा आश्वासित हो सन्ध्या की।

प्रभातकाले चोत्थाय पूर्वां सन्ध्यामुपास्य च।
प्रशुची परमं प्राप्यं नियमेन च।
हुताग्निहोत्रमासीनं विश्वामित्रमवन्दताम्॥

(वा० रा० 29।31-32)

राम लक्ष्मण ने प्रातःकाल उठ, स्नानादि से शुद्ध हो, सन्ध्या कर, परब्रह्म का ध्यान कर, अग्निहोत्र करके बैठे हुए विश्वामित्र को अभिवादन किया।

स्त्रियों के समानाधिकार तथा उनका सम्मान—

गते पुरोहिते रामः स्नातो नियतमानसः।
सह पत्न्या विशालाक्ष्या नारायणमुपागमत्॥

(वा० रा० अयो० 6।1)

पुरोहित के चले जाने पर राम ने पत्निसहित स्नान तथा नियत मन से परमात्मा की उपासना की।

यहाँ पत्नी सहित राम के परमात्मा की उपासना का वर्णन है, अतः स्त्री को सन्ध्या करने का समानाधिकार है। न केवल पति के साथ ही, किन्तु अकेले भी स्त्री को सन्ध्या करने का अधिकार सूचित किया है, देखिये निम्न वचन—

सन्ध्यायमान श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी।
नदीं चेमां शुभजलां सन्ध्यायै वरवर्णिनी॥

(वा० रा० सुन्दर० 15।49)

हनुमान् सोचता है कि वह सन्ध्याशील सीता इस शुभ जल वाली नदी पर सन्ध्या करने अवश्य आयेगी।

इस कथन में स्त्रियों को स्वतन्त्र भी सन्ध्या करने का अधिकार सूचित किया है।

प्राणायामेन पुरुषं ध्यायमाना जनार्दनम्।

(वा० रा० अयो० 4।33)

कौशल्या प्राणायाम के साथ परमात्मा का ध्यान अर्थात् सन्ध्या करने का अधिकार सूचित होता है।

यह तो हुई स्त्री को सन्ध्या करने के अधिकार की बात, अब हवन करने का भी अधिकार स्त्री को है, यह भी देखिये–

सा क्षौमवसना हृष्टा नित्यं व्रतपरायणा।
अग्निं जुहोति स्म तदा मन्त्रवत्कृतमङ्गला॥

(वा० रा० अयो०)

वह कौशल्या रेशमी वस्त्र पहिने हुए व्रतपरायणा प्रसन्न हुई मन्त्रसहित हवन करती थी।

दीक्षा का अधिकार–

श्रीमान् सहपत्नीभिः राजा दीक्षामुपाविशत्॥

(वा० रा० बाल० 13।41)

महाराजा दशरथ ने पत्नियों के सहित दीक्षा ली। यहाँ भी दीक्षा में स्त्री का समानाधिकार दर्शाया गया है।

स्त्री को देखकर कोप की शान्ति और अवाङ्मुखता–

स तां समीक्ष्यैव हरीशपत्नीं तस्थावुदासीनतया महात्मा।
अवाङ्मुखोऽभून्मनुजेन्द्रपुत्रः स्त्रीसंनिकर्षाद्विनिवृत्तकोपः॥

(वा० रा० कि० 3।39)

तारा नाम की बाली पत्नी को देख लक्ष्मण स्तब्ध अवाङ्मुख खड़ा हो गया तथा स्त्री के सम्मुख क्रोधरहित हो गया।

स्त्री को देखकर क्रोधरहित तथा अवाङ्मुख हो जाना स्त्री का सम्मान करना है।

पतिव्रत धर्म की भाँति पत्नीव्रत धर्म भी कहा गया है–

मोघं हि धर्मश्चरितो मयायं तथैकपत्नीत्वमिदं निरर्थकम्।

(वा० रा० सुन्दर० 28।13)

राम, सीता के चले जाने पर दुःख से कहते हैं कि मैंने व्यर्थ ही धर्म का आचरण किया और यह एक पत्नीव्रत भी निरर्थक रहा।

इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री को ही पतिव्रता धर्म पालन करना पड़ता है ऐसा नहीं, पुरुष को भी पत्नीव्रत धर्म पालन करना होता है।

नियोग की प्रथा–

रामप्रसादात्कीर्तिं च कपिराज्यं च शाश्वतम्।
प्राप्तवान् हि सुग्रीवो रुमां मां च परन्तप।।

(वा० रा० किष्कि० 35।5)

तारा बालि–पत्नी लक्ष्मण को कहती है कि राम की कृपा से सुग्रीव ने यश, स्थायी कपिराज्य, रुमा और मुझे प्राप्त किया है।

राम के द्वारा बाली के वध हो जाने से उसकी पत्नी तारा को सुग्रीव ने अपनी पत्नी बना लिया था।

पति के जीवितकाल में उससे त्यक्त स्त्री का देवर आदि से नियोग–

नास्ति मे त्वय्यभिष्वङ्गो यथेष्टं गम्यतामितः।
तदद्य व्याहृतं भद्रे ममैतत्कृतबुद्धिना।।
लक्ष्मणे वाथ भरते कुरु बुद्धिं यथासुखम्।
शत्रुघ्ने वाथ सुग्रीवे राक्षसे वा विभीषणे।।

(वा० रा० युद्ध० 115।21, 23)

लंकाविजय कर लेने पर राम के सम्मुख सीता लाई गई, सीता को देख राम उसे कहते हैं तुम पर-पुरुष रावण के अधीन रही अब मेरे काम की तुम नहीं हो, तुम्हारे अन्दर मेरा प्रेम या लगाव नहीं रहा, जा यथेष्ट चली जाओ, आज मैंने निश्चय घोषणा रूप से कह दिया। लक्ष्मण के प्रति या भरत के प्रति अथवा शत्रुघ्न के प्रति मन लगाओ या सुग्रीव अथवा विभीषण के प्रति मन लगाओ।

यहाँ यह भी स्पष्ट होता है कि नियोग में प्रथम अधिकार भाई के साथ पुनः अन्य के साथ करने का है।

क्रोधविजय महान् पुरुषार्थ—

यः समुत्पतितं क्रोधं क्षमयैव निरस्यति।
यथोरगस्त्वचं जीर्णं स वै पुरुष उच्यते॥

(वा० रा० सुन्दर० 55।6)

जो मनुष्य उठे हुए क्रोध को ऐसे निराकृत कर देता है—हटा देता है—छोड़ देता है जैसे सर्प केंचुली को वह पुरुष अर्थात् पुरुषार्थी कहलाता है।

अतिस्नेह (मोह) ठीक नहीं—

स्मृत्वा वियोगजं दुःखं त्यज स्नेहं प्रियजने।
अतिस्नेह परिष्वङ्गाद वर्तिराद्रापि दह्यते॥

(वा० रा० किष्कि० 1।18)

लक्ष्मण राम को कहता है कि प्रियजन के वियुक्त हो जाने पर उसका स्नेह छोड़ देना चाहिये, क्योंकि उसका स्मरण करने से वियोग का दुःख शरीर को जला देता है। अतिस्नेह से गीली बत्ती भी जल जाती है। यहाँ अतिस्नेह को दोषरूप में बतलाया गया है।

सत्य की महिमा–

सत्यमेवेश्वरो लोके सत्ये धर्मः सदा श्रितः।
सत्यमूलानि सर्वाणि सत्यान्नास्ति परमं पदम्॥
भूमिः कीर्तियशो लक्ष्मीः पुरुषं प्रार्थयन्ति हि।
सत्यं समनुवर्तन्ते सत्यमेव भजेत तत्॥

(वा० रा० अयो० 109।13,22)

संसार में सत्य ही ईश्वर है, सत्य में धर्म सदा रहता है। सब सत्य के मूल पर स्थिर हैं, सत्य से परे कोई पद नहीं है। सत्य से भूमि, कीर्ति, यश, लक्ष्मी ये वस्तुएँ मनुष्य को चाहती हैं, ये सत्य के पीछे चलती हैं अतः सत्य का सेवन करना चाहिये।

देवों की आयु–

रूपं बिभ्रति सौमित्रे पञ्चविंशतिवार्षिकम्।
एतद्धि किल देवानां वयो भवति नित्यदा॥

(वा० रा० अरण्य० 17।18)

राम कहते हैं–हे लक्ष्मण! देवों (बालब्रह्मचर्यपूर्ण विद्वानों) का रूप और आयु सदा 25 वर्ष जैसा होता है।

प्रियवादी बहुत हैं पर हितकर कटुभाषी अल्प होते हैं–

सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥

(वा० रा० युद्ध० 16।21)

संसार में प्रियवादी (खुशामदी) बहुत हैं, किन्तु हितकर कटु (सुनने में प्रतिकूल) बोलने वाला दुर्लभ है।

संयोग वियोग, हानि लाभ, जीवन मरण प्रवाहित रहते हैं–

सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः।
संयोगा वियोगान्ता मरणान्तं च जीवितम्॥

(वा० रा० अयो० 105।16)

समस्त संचय (धनसञ्चय, अन्नसञ्चय आदि सञ्चय) अन्त में क्षीण होने वाले हैं, एवं ऊँचे स्थान अन्त में गिरने वाले हैं। संयोगों का अन्त में वियोग होना है और जीवन का अन्त में मरण भी होना ही है।

गई रात फिर नहीं लौटती, नदी पीछे नहीं लौटती–

अत्येति रजनी या तु सा न प्रति निवर्तते।
यात्येव यमुना पूर्ण समुद्रमुदकाकुलम्॥

(वा० रा० अयो० 105।19)

जो रात बीत जाती है वह पीछे नहीं लौटती (गया वक्त फिर हाथ आता नहीं), नदी बहती हुई अन्त में जल से आकुलित पूर्ण समुद्र को प्राप्त हो जाती, पुनः लौट नहीं सकती।

बन्धुबान्धवादिसंयोग अस्थिर ही है–

यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महार्णवे।
समेत्य तु व्यपेयातां कालमासाद्य कश्चन॥
एवं भार्याश्च पुत्राश्च ज्ञातयश्च वसूनि च।
समेत्य व्यवधावन्ति ध्रुवो ह्येषां विनाभवः॥

(वा० रा० अयो० 105।26-27)

जैसे भिन्न-भिन्न स्थानों से बहती हुई लकड़ियाँ बड़े नद में इकट्ठी हो जाती हैं, पुनः कुछ काल पीछे अलग-अलग हो जाती हैं, इसी प्रकार स्त्री, पुत्र, बन्धु, बान्धव और धन मिलकर पुनः इनका वियोग हो जाना भी निश्चय है।

राम ईश्वर के अवतार नहीं थे–

अस्ति कच्चित्त्वया दृष्टा सा कदम्बप्रिया प्रिया।
कदम्ब यदि जानीषे शंस सीतां शुभाननाम्॥

(वा० रा० अरण्य० 60।12)

हे कदम्ब वृक्ष! कदाचित् तूने कदम्ब से प्रेम करने वाली प्यारी सीता देखी हो तो बता।

इस प्रकार जड़ पदार्थों से अज्ञों की भाँति सीता को पूछते फिरना, राम ईश्वर का अवतार नहीं है, यह बतलाता है।

किं त्वयां तप्यते वीर यथाऽन्यः प्राकृतस्तथा।

(वा० रा० युद्ध० 2।2)

सुग्रीव राम को सीता के लिये व्याकुल देखकर समझाता है कि हे राम! क्यों तुम साधारण मनुष्य की भाँति दुःखित हो रहे हो।

ईश्वर का अवतार राम होते तो ऐसे दुखी न होते और सुग्रीव जैसे को सान्त्वना देने का अवसर न आता।

करिष्यामि यथार्थं तु काण्डोर्वचनमुत्तमम्।
धर्मिष्ठं च यशस्यं च स्वर्ग्यं स्यात्तु फलोदयम्॥

(वा० रा० युद्ध० 18।32)

राम कहता है कि मैं काण्डु का वचन पालन करूँगा। वह धर्मानुकूल, यशोवर्धक और स्वर्गदायक है।

यहाँ राम को स्वर्ग की इच्छा रखना उसे ईश्वर का अवतार सिद्ध नहीं करती।

यथैव मां वनं यान्तमनुयातो महाद्युतिः।
अहमप्यनुयास्यामि तथैवैनं यमक्षयम्॥

(वा० रा० युद्ध० 49।18)

लक्ष्मण के शक्तिवाण लगने पर मरे जैसे हो जाने पर राम विलाप करते हैं कि 'हे लक्ष्मण! जैसे वन जाते हुए तू मेरे साथ चला वैसे ही तेरे यम लोक जाते हुए के साथ मैं भी जाऊँगा।'

इस प्रकार अधीर हो यमलोक जाने को उद्यत होना राम को ईश्वर का अवतार सिद्ध नहीं करता।

मा वीर भार्ये विमतिं कुरुष्व लोको हि सर्वो विहितो विधात्रा। तं चैव सर्वं सुखदुःखयोगं लोकोऽब्रवीत् तेन कृतं विधात्रा।। (वा० रा० किष्कि० 24।45)

राम सुग्रीव को कहते हैं कि हे वीर! भार्या के सम्बन्ध में विमति मत कर, समस्त संसार विधाता ने रचा है। उस विधाता की ओर से सुख दुःख का योग होता है।

राम यदि ईश्वर का अवतार होते तो विधाता का स्मरण क्यों करते?

सामाजिक

वर्णों में समदृष्टि–

रामायण काल में ब्राह्मण से लेकर शूद्र पर्यन्त सबको समदृष्टि एवं आदरदृष्टि से देखते थे, ऐसा नहीं कि शूद्र को आजकल की भाँति घृणादृष्टि या नीचदृष्टि से देखते हों।

ब्राह्मणान् क्षत्रियान् वैश्यान् शूद्रांश्चैव सर्वशः।
समानयस्व सत्कृत्य सर्वदेशेषु मानवम्।।

(वा० रा० बाल० 13।20)

दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में वसिष्ठ ने सुमन्त्र को आज्ञा दी कि ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों को सत्कृत करके लाओ।

राम के राज्याभिषेक के समय म्लेच्छ भी बुलाये गये थे–

म्लेच्छाश्चार्याश्च ये चान्ये वनशैलान्तवासिनः।।

(वा० रा० अयो० 39।25)

म्लेच्छ और आर्य तथा वनपर्वतवासी भी आए थे।

सभा के धर्म–

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा, वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम्। नासौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति, न तत्सत्यं यच्छलेनानुविद्धम्।।

(वा० रा० उत्तर० 59।34)

वह सभा सभा नहीं है जहाँ वृद्ध नहीं हैं, वे वृद्ध–वृद्ध नहीं जो धर्म बात नहीं कहते, वह धर्म–धर्म नहीं जिसमें

सत्य नहीं, वह सत्य-सत्य नहीं जो छल से युक्त हो।

उत्तम, मध्यम और अधम विचार के लक्षण–

ऐक्यमत्यमुपागम्य शास्त्रदृष्टेन चक्षुषा।
मन्त्रिणो यत्र निरतास्तमाहुर्मन्त्रमुत्तमम्॥
बह्वोरपि मतिर्गत्वा मन्त्रिणामर्थनिर्णयः।
पुनर्यत्रैकतां प्राप्तः स मन्त्रो मध्यमः स्मृतः॥
अन्योऽन्यमतिमास्थाय यत्र सम्प्रति भाष्यते।
न चैकमत्ये श्रेयोऽस्ति मन्त्रः सोऽधम उच्यते॥

(वा० रा० युद्ध० 6।12-24)

शास्त्रदृष्टि से एक मत होकर जहाँ विचारक विचार करते हैं वह उत्तम विचार है। जहाँ विचारक बहुत मतियों को प्राप्त होकर पुनः एक मत निर्णय होवे वह मध्यम विचार है। एक दूसरे की मति को लेकर जहाँ विचारक बोलते हों परन्तु उस एक मत में कल्याण नहीं है, वह विचार अधम है।

गुण-कर्म की समानता से विवाह–

सदृशो धर्मसम्बन्धः सदृशी रूपसम्पदा।
रामलक्ष्मणयो राजन् सीतयोर्मिलया सह॥

(वा० रा० बाल० 72। 2-3)

इस विवाह प्रसंग में राम का सीता के साथ और लक्ष्मण का ऊर्मिला के साथ धर्म सम्बन्ध और रूपसम्पदा समान है।

नागरिक शिष्टाचार एवं प्रथाएँ–

मित्रता में हाथ से हाथ मिलाने और हाथ दबाने का शिष्टाचार–

रोचते यदि ते सख्यं बाहुरेष प्रसारितः।
गृह्यतां पाणिना पाणिर्मर्यादा बध्यतां ध्रुवा॥

(वा० रा० किष्कि० 5।12)

सुग्रीव कहता है राम! यदि तुझे मित्रता करनी है तो यह

फैलाया हुआ हाथ अपने हाथ से ग्रहण कीजिये, मर्यादा को बाँधिये।

एतत्तु वचनं श्रुत्वा सुग्रीवस्य सुभाषितम्।
सम्पृहृष्टमना हस्तं पीडयामास पाणिना।

(वा० रा० किष्कि० 5।13)

सुग्रीव का यह सुन्दर वचन सुनकर राम ने प्रसन्नमन हो अपने हाथ से उसके हाथ को दबाया।

नमस्ते करने और मित्रदृष्टि (कृपादृष्टि) रखने को कहने का शिष्टाचार—

नमस्तेऽस्तु गमिष्यामि मैत्रेणेक्षस्व चक्षुषा

(वा० रा० अयो० 52।17)

विश्वामित्र ऋषि वसिष्ठ के प्रति कहते हैं कि आप को नमस्ते हो, अब मैं जाऊँगा, मित्रदृष्टि से देखिये (कृपादृष्टि रखियेगा)।

शासक को शिर झुकाकर नमस्कार करने का शिष्टाचार—

राक्षसा राक्षसश्रेष्ठं शिरोभिस्तं ववन्दिरे।

(वा० रा० युद्ध० 11।13)

राक्षसपति रावण को राक्षसों ने अपने शिरों से-शिरों को झुकाकर-नमस्कार किया।

अपने आपको गाली देने की प्रथा—

सद्यः प्रसक्तो भवतु स्त्रीष्वक्षेषु च नित्यशः।
कामक्रोधाभिभूतश्च यस्यार्योऽनुमते गतः॥

(वा० रा० अयो० 75।40)

भरत अपने को गाली देता है—वह तुरन्त स्त्रियों में और जुए में फँस जाए तथा काम क्रोध के वश हो जाए, जिसके अनुमत से राम वन को गया।

समारोह के अवसर पर पताकाएँ बाँधने आदि की प्रथा–

आबध्यन्तां पताकाश्च राजमार्गाश्च सिच्यन्ताम्।।

(वा० रा० अयो० 3।16)

राम के राज्याभिषेक समारोह में स्थान–स्थान पर पताकाएँ बाँधने और मार्गों पर जल छिड़कने की प्रथा इस वचन में स्पष्ट है।

सुगन्ध जल छिड़कने की प्रथा–

सिक्तां चन्दनतोयैश्च। (वा० रा० 6।1,7।3)

यहाँ चन्दन–जल का छिड़काव करने की प्रथाम दर्शाई है।

पारिभाषिक शब्द और कारनाम (मुहावरे)–

प्रातराश (नाश्ता)–

शृणु मैथिलि मद्वाक्यं मासान्द्वादश भामिनि।
कालेनानेन नाभ्येषि यदि मां चारुहासिनि।।
ततस्त्वां प्रातराशार्थं सूदाश्छेत्स्यन्ति लेशशः।।

(वा० रा० अर० 56।24–25)

रावण सीता को कहता है कि हे सीता! मेरा वाक्य सुन, यदि बारह मास बीतने पर तुम मुझे प्राप्त न होगी तो रसोइये तुम्हें प्रातराश (नाश्ते) के लिए काट डालेंगे।

मम त्वां प्रातराशार्थमालभन्ते महानसे।

(वा० रा० सुन्दर० 22।9)

मेरे प्रातराश के लिए तुम्हें रसोई में पाचक काट डालेंगे।

ध्रुवं मां प्रातराशार्थं राक्षसः कल्पयिष्यति।

(वा० रा० सुन्दर० 26।36)

सीता कहती है कि निश्चय राक्षस प्रातराश के लिये मुझे पका डालेगा।

नय (कानून)–

त्वय्येव हनुमन्नस्ति बलं बुद्धिः पराक्रमः।
देशकालानुवृत्तिश्च नयश्च नयपण्डित॥

(वा० रा० किष्कि० 47।7)

हे हनुमान्! तुम्हारे में बल है, बुद्धि है, पराक्रम है, देशकाल का अनुभव है तथा हे नयपण्डित! तुम्हारे में नय (कानून) भी है।

भक्त (भत्ता)–

कच्चिद बलस्य भक्तं च वेतनं च यथोचितम्।
सम्प्राप्तकालं दातव्यं ददासि न विलम्बसे॥
कालातिक्रमणच्चैव भक्तवेतनयोर्भृताः।
भर्तुरप्यतिकुप्यन्ति सोऽनर्थः सुमहान् स्मृतः॥

(वा० रा० अयो० 100। 33-34)

राम चित्रकूट पर आये हुए भरत को पूछते हैं कि कदाचित् बल-सैन्यबल अर्थात् सैनिक आदि कर्मचारी का यथोचित देने योग्य भत्ता और वेतन ठीक समय पर दे देते हो, देर तो नहीं करते? भत्ते और वेतन का काल उल्लंघन कर देने से भृत्य (नौकर) मालिक पर कुपित हो जाते हैं। इससे महान् अनर्थ होता है।

महत्तर (मेहतर)–

रजकास्तन्तुवायाश्च ग्रामघोषमहत्तराः।
शैलूषाश्च सह स्त्रीभिर्यान्ति कैवर्तकास्तथा॥

(वा० रा० अयो० 84।15)

यहाँ रजक (धोबी) तन्तुवाय (जुलाहा) के साथ ग्राम-महत्तर एवं घोष-मेहत्तर के लिये आया है।

विष्टी (भिश्ती-पानी छिड़कने वाला)–

विष्टीरनेकसाहसस्त्रीश्चोदयामास भागशः।
समीकुरुत निम्नानि विषमाणि समानि च॥

स्थानानि च निरस्यन्तां नन्दिग्रामादितः परम।
सिञ्चन्तु पृथवीं कृत्स्नां हिमशीतेन वारिण॥

(वा० रा० युद्ध० 127। 5-7)

लंका विजय के अनन्तर राम जब अयोध्या में प्रवेश के लिये उद्यत हुए तब सहस्रों विष्टियों-भिश्तियों को विभागशः आज्ञा दी कि नन्दिग्राम से लेकर निम्न विषम और सम स्थानों को समान करो—अच्छे स्थान बनाओ तथा भूमि को ठण्डे जल से सींचो अर्थात् भूमि पर ठण्डे जल का छिड़काव करो।

धर्मपत्नी (पत्नी) शब्द—

बभूव बुद्धिस्तु हरीश्वरस्य यदीदृशी राघवधर्मपत्नी।

(वा० रा सुन्द० 9।72)

यहाँ राम की पत्नी सीता को राम की धर्मपत्नी कहा है।

आँसू पोंछने का मुहावरा—

त्वद्विनाशात्करोम्यद्य तेषामश्रुप्रमार्जनम्।

(वा० रा० अर० 29।24)

खर राक्षस ने राम को कहा कि तूने चौदह सहस्र राक्षसों को मारा है, आज तेरा विनाश करके उनका अश्रुप्रमार्जन (आँसू पोंछना) करता हूँ।

रामायण-काल की विशेष वस्तुएँ

कपास और रुई के वस्त्र–

वेष्टन्ते तस्य लाङ्गूलं जीर्णैः कार्पासिकैः पटैः।

(वा० रा० सुन्दर० 53।6)

पुराने कपास के वस्त्रों से लाँगूल को लपेटते हैं।

ततस्तस्य वचः श्रुत्वा मम पुच्छं समन्ततः।
वेष्टितं शणवल्कैश्च जीर्णैः कार्पासिकैः पटैः॥

(वा० रा० सुन्दर० 58।152)

फिर उसका वचन सुनकर मेरे पुच्छ को अब ओर से शण के छिलकों और जीर्ण कपासवस्त्रों से लपेटा।

जलचर मनुष्य–

अन्तर्जलचरा घोरा नरव्याघ्रा इति श्रुताः।

(वा० रा० किष्कि० 40।27)

घोर जलचर बड़े-बड़े नर सुने गये हैं।

राक्षस का स्वरूप (मनुष्य जाति का भेद)–

जाम्बवानृक्षराजश्च राक्षसश्च विभीषणः।

(वा० रा० युद्ध० 37।1)

यहाँ जाम्बवान् और ऋक्षराज के साथ विभीषण राक्षस के पढ़ने से राक्षस भी प्राणि जाति है कोई अदृश्य पदार्थ नहीं।

ददर्श भूमौ निष्क्रान्तं राक्षसस्य पदं महत्।

(वा० रा० अर० 64।33)

भूमि में उभरा हुआ राक्षस का बड़ा पैर देखा।

यहाँ भी राक्षस दृश्य प्राणिजाति है। यह स्पष्ट है, केवल बड़े आकार का होना ही उसको कहा है।

किं पुनर्मद्विधो जनः। (वा० रा० युद्ध० 18।25)

यहाँ राम ने विभीषण राक्षस को अपने जैसा मनुष्य स्पष्ट कहा है।

राष्ट्र तथा राष्ट्रीय वर्णन

रामायण में राष्ट्र एवं राष्ट्रीय सिद्धान्तों के सम्बन्ध में भी पर्याप्त वर्णन मिलता है, उनका यहाँ वर्णन करते हैं-

रामायण में 'स्वराज्य' शब्द-

परस्पर्शात्तु वैदेह्या न दुःखतरमस्ति मे।
पितुर्विनाशात् सौमित्रे स्वराज्यहरणात्तथा।।

(वा० रा० अरण्य० 36।29)

लक्ष्मण को राम कहते हैं कि हे लक्ष्मण! सीता के परस्पर्श से तथा पिता के मरण से और स्वराज्य के हरण से अधिक दुःखदायक मेरे लिये कुछ नहीं है।

धर्मापदेशात्त्यजतः स्वराज्यं मां चाप्यरण्यं नयतः पदातिम्।

(वा० रा० सुन्दर० 36।29)

भरत कहता है कि धर्म के कारण स्वराज्य छोड़ते हुए और जङ्गल में पैदल चलते हुए राम को दुःख नहीं, ऐसा राम है। इत्यादि।

उक्त वचन में भी स्वराज्य शब्द आया है।

राजा, माता पिता है-

राजा माता पिता चैव राजा हितकरो नृणाम्।

(वा० रा० अयो० 68।34)

राजा, माता पिता है, राजा प्रजाओं का हितकर है।

यहाँ यह लक्षित होता है कि जो राजा प्रजा का हितकर नहीं वह राजा, राजा के कहलाने योग्य नहीं और न वह माता पिता के सदृश समझा जाने योग्य है।

पुरोहित (प्राइवेट सेक्रेटरी)-

पुरोहितस्त्वां कुशलं प्राह सर्वे च मन्त्रिणः।

(वा० रा० अयो० 70।3)

पुरोहित ने तुझे ठीक कहा है एवं सब मन्त्रियों ने भी।

उवाच वचनं श्रीमान् वसिष्ठं मंत्रिणां वरम्।

(वा० रा० अयो० 93।6)

यहाँ वसिष्ठ पुरोहित को मन्त्रियों से श्रेष्ठ मन्त्री कहा है। राजा के 14 दोष–

नास्तिक्यमनृतं क्रोधं प्रमादं दीर्घसूत्रताम्।
अदर्शनं ज्ञानवतामालस्यं पंचवृत्तिताम्।।
एकचिन्तनमर्थानामनर्थज्ञैश्च मन्त्रणम्।
निश्चितानामनारम्भं मन्त्रस्यापरिरक्षणम्।।
मङ्गलस्याप्रयोगं च प्रत्युत्थानं च सर्वतः।
कच्चित्त्वं वर्जयस्येतान् राजदोषांचतुर्दश।।

(वा० रा० अयो० 100। 65–66)

राम भरत से कहते हैं कि हे भरत! तू नास्तिकता, अनृत, क्रोध, प्रमाद, दीर्घसूत्रता, ज्ञानियों का अदर्शन, आलस्य, पाँच इन्द्रियों के वशीभूत होना, दूसरों के बिना अकेले विचार करना, अर्थ के न जानने वालों के साथ विचार करना, निश्चित का आरम्भ न करना, गुप्त विचार की रक्षा न करना, कल्याण–कर वस्तु का प्रयोग न करना, सब का प्रत्युत्थान इन चौदह दोषों को तो सेवन नहीं करता है।

राजा द्वारा ऋषि–सम्मान–

भरद्वाजाश्रमं दृष्ट्वा क्रोशादेव निरर्षभः।
जनं सर्वमवस्थाप्य जगाम सह मन्त्रिभिः।।
पद्भ्यामेव तु धर्मज्ञो न्यस्तशस्त्रपरिच्छदः।
वसानो वाससो क्षौमे पुरोधाय पुरोहितम्।।

(वा० रा० अयो० 90।2)

भरत चित्रकूट पर जाते हुए भरद्वाज ऋषि के आश्रम को जान कोश भर से मन्त्रियों के साथ शस्त्र आदि शासन भार

छोड़कर दो रेशमी वस्त्र पहन कर तथा पुरोहित को आगे करके पैदल गया।

दूत और चारक (गुप्तचर) में भेद–

नायं दूतो महाप्राज्ञ चारकः प्रतिभाति मे।

(वा० रा० युद्ध० 20।33)

यह दूत नहीं है, अपितु चारक है।

संग्राम में वैद्य (डॉक्टर)–

लक्ष्मणस्य ददौ नस्तः सुषेणः सुमहाद्युतेः।

(वा० रा० युद्ध० 101।45)

लक्ष्मण जब युद्ध में प्रहार से अचेत हो गया था उस समय उसकी नाक में सुषेण नामक चिकित्सक ने ओषधि देकर सचेत किया।

तानार्तान्निष्टसंज्ञाँश्च गतासूंश्च बृहस्पतिः।
विद्याभिर्मन्त्रयुक्ताभिरोषधीभिश्चिकित्सति।।

(वा० रा० युद्ध० 50।28)

संग्राम में उन पीड़ितों–प्रहार से आहतों–अचेत हुओं मरे जैसों की बृहस्पति चिकित्सक मन्त्रयुक्त विद्याओं (मानसिक विधियों) और ओषधियों से चिकित्सा करता है।

प्रजा के सुखार्थ राज्य की व्यवस्थाएँ–

1. बाल विवाह तथा वृद्ध विवाह होने की रोक, जिससे विधवाएँ राज्य में न हो।

2. सिंह आदि जंगली जन्तुओं का नियन्त्रण एवं सर्प आदि विषजन्तुओं का प्रतिकार, जिससे प्रजाजन इनसे पीड़ित न हों।

3. स्वास्थ्य के नियमों के अनुसार स्थान, मकान, जल, खानपान की व्यवस्था तथा चिकित्सालयों की समुचित स्थापना, जिससे रोग की अधिकता तथा रोग से असाध्य

स्थिति का अवसर न बन सके।

4. समिति (पुलिस) आदि का ठीक प्रबन्ध होना, जिससे चोर, डाकू का अभाव हो।

5. न्यायालयों की स्थापना जिससे अनर्थ, पाप, अन्याय परस्पर प्रजाजन न कर सकें।

6. बालपालन शिशुचिकित्सालय आदि की व्यवस्था जिससे उन का मरण शीघ्र न हो।

7. धर्म के प्रचारकों, पण्डितों, पुरोहितों एवं साधुजनों को वृति देना एवं उनको प्रचार व कथा का अवसर देना जिससे धर्म-परायण जनता बनी रहे।

इत्यादि बातों के लिये देखो राम प्रकरण में रामराज्य का वर्णन।

सत्याग्रह (धारण-भूख हड़ताल)-

इह तु स्थण्डिले शीघ्रं कुशानास्तर सारथे।
आर्यं प्रत्युपवेक्ष्यामि यावन्मे न प्रसीदति।।
निराहारो निरालोको धनहीनो यथा द्विजः।
शेष्ये पुरस्ताच्छालाया यावन्न प्रतियास्यति।।

(वा० रा० अयो० 111।13-14)

चित्रकूट पर्वत पर राम को अयोध्या लौटाने के लिए गए हुए भरत अपने सारथि को कहते हैं कि हे सारथि! इस चबूतरे-थड़े चट्टान पर तू कुशाओं को शीघ्र बिछा-मैं राम के सन्मुख बैठूँगा जब तक अयोध्या लौटने को प्रसन्न न हों तथा निराहार (भूख हड़ताल) बिना इधर उधर देखे एक दृष्टि से धन हीन ब्राह्मण की भाँति कुटी के सामने लेट जाऊँगा जब तक राम न लौटेंगे।

देश

इस प्रकरण में दशरथ का राज्यस्थान, रावण की लङ्कापुरी तथा अन्य सामान्य देश सम्बन्धी बातों का वर्णन होगा।

दशरथ का राज्यप्रदेश–

यावदावर्तते चक्रं तावती मे वसुन्धरा।
द्राविडः सिन्धुसौवीराः सौराष्ट्रा दक्षिणपथाः।।
वङ्गा मागधा मत्स्याः समृद्धाः काशिकोशलाः।
तत्र जातं बहुद्रव्यं धनधान्यमजाविकम्।
ततो वृणीष्व कैकेयि यद्यत्त्वं मनसेच्छसि।।

(वा० रा० अयो० 10।38-40)

दशरथ कैकेयी को मनाते हुए कहते हैं कि हे कैकेयी, राम को वनवास न दे किन्तु राज्य सारा ले ले जहाँ तक सूर्य अपना आवर्तन करता है उतनी पृथिवी मेरी है जिसमें द्राविड़, सिन्धु, सौवीर (सिन्धु नदी के आस पास का देश), सौराष्ट्र (गुजरात, काठियावाड़), दक्षिणापथ (अवन्ती और ऋष्य पर्वत को पार करके पयोष्णी नदी के दक्षिण का देश), वङ्ग, मागध, मत्स्य, काशी, कौसल देश हैं इनमें बहुत द्रव्य धन धान्य आदि वस्तुएँ होती हैं चाहे तो इनको माँग ले।

उक्त कथन से दशरथ का चक्रवर्ती राज्य था, ऐसा स्पष्ट होता है।

पृथिव्यां सागरान्तायां यत्किञ्चिदधिगम्यते।
तत्सर्वं तव दास्यामि मा च मन्युमाविश।।

(वा० रा० अयो० 12।35)

दशरथ कहते हैं कि हे कैकेयी! पृथिवी पर सागरपर्यन्त जो कुछ प्राप्त है वह सब तुझे दे दूँगा, तू क्रोध न कर।

यहाँ दशरथ का राज्य सागर पर्यन्त था, ऐसा भी लक्षित होता है।

रामायणकाल की सात नदियां—

ह्लादिनी पावनी चैव नलिनी च तथैव च।
तिस्रः प्राचीं दिशं जग्मुर्गङ्गः शिवजलाः शुभाः॥
सुचक्षुश्चैव सीता च सिन्धुश्चैव महानदी।
तिस्रश्चैता दिश जम्मुः प्रतीचीं तु दिशं शुभाः॥
सप्तमी चान्वगात्तासां भागीरथमथो नृपम्॥

(वा० रा० बाल० 43।12-14)

ह्लादिनी, पावनी, नलिनी, ये तीन पूर्व दिशा की ओर जाती हैं, सुचक्षु, सीता, सिन्धु ये तीन पश्चिम दिशा को जाती हैं, तथा सातवीं गंगा (भागीरथी)।

लंका—

लंकानाम समुद्रस्य मध्ये मम महापुरी।
सागरेण परिक्षिता निविष्टा गिरिमूर्ध्नि॥

(वा० रा० अरण्य० 47।18)

रावण कहता है कि मेरी महापुरी लंका समुद्र के मध्य में सागर से घिरी हुई पर्वत के ऊपर है।

निविष्टा तस्य (त्रिकूटस्य) शिखरे लंका रावणवाटिका।

(वा० रा० युद्ध० 39।20)

त्रिकूट पर्वत के शिखर पर लंका थी।

कैलासशिखराकारे त्रिकूटशिखरे स्थिताम्।
लंकामीक्षस्व वैदेहि निर्मितां विश्वकर्मणा॥

(वा० रा० युद्ध० 123।3)

राम पुष्पकविमान में बैठे हुए आकाशमार्ग से यात्रा करते हुए सीता से कहते हैं कि हे सीता! कैलास शिखर जैसे त्रिकूट शिखर पर विश्वकर्मा की बनाई लंकापुरी को देखो।

रमणीयतरं दृष्ट्वा सुवेलस्य गिरेस्तटम्।

(वा० रा० युद्ध० 37।36)

लंका समुद्रतट से शतयोजन पर थी, शत का अर्थ सौ संख्या लिया जाए तो 100 योजन अर्थात् 400 कोश 500 मील हुए, यदि शत का अर्थ अनेक योजन लिया जाए जैसे शत सहस्र निघण्टु में बहुनाम हैं तब अनेक योजन पर थी।

गिरेर्मूर्ध्निस्थितां लंका पाण्डुरैर्भवनैः शुभैः।

(वा० रा० सुन्दर० 2।19)

लंका पर्वत के शिखर पर सफेद मकानों, चूने के मकानों से बनी हुई थी।

परिक्षिप्ता समुद्रेण लंकेयं शतयोजना।

(वा० रा० अरण्य० 55।19)

यह शतयोजन वाली लंका समुद्र से घिरी हुई है। लंका शतयोजन 400 कोश 500 मील या 800 मील परिधि वाली है।

यस्यां स्तम्भसहस्त्रेण प्रासादः समलङ्कृतः।

(वा० रा० युद्ध० 39।23)

लंका में सहस्त्रखम्भों वाले महल (सभाभवन) थे।

सप्तभौमाष्टभौमश्च स ददर्श महापुरीम्।
तलैः स्फटिकसंकीर्णैः।।

(वा० रा० सुन्दर० 3।52)

सात भूमियों वाले आठ भूमियों वाले मकानों से युक्त तथा स्फटिक लगे तलों (फर्शों) से युक्त लंका को हनुमान ने देखा।

लतागृहांश्चित्रगृहान् पुष्पगृहाणि च। क्रीडागृहाणि च भूमीगृहांश्चैत्यगृहान्।। गृहातिगृहकानिप०।।

(वा० रा० सुन्दर० 12।1, 12, 13, 14)

लंका में लतागृह, चित्रीकृतगृह, पुष्पावृतगृह, क्रीडागृह भूतलगृह घर में घर थे।

उपर्युक्त वचनों द्वारा लंका का स्वरूप इस प्रकार समझिये—

१. लंका समुद्र के मध्य में

२. सुवेल पर्वत के त्रिकूट शिखर पर

३. समुद्र तट (भारत समुद्रतट) से शतयोजन दूरी पर

४. शत योजन विस्तारवाली

५. चूने के पक्के सात आठ मंजिलों वाले स्फटिक के फर्शवाले मकानों वाली तथा लतागृह, पुष्पगृह, क्रीडागृह, भूतलगृह, गृहान्तरगृह से युक्त और सहस्त्र खम्भों वाले सभाभवन से युक्त विश्वकर्मा की बनाई गई थी।

अर्थात् लंका भारत के समुद्रतट से शतयोजन पर समुद्र के मध्य में सुवेलपर्वत के त्रिकूट शिखर पर थी जिसका राज्य विस्तार शतयोजन था।

विन्ध्यपर्वत—

हृष्टपक्षिगणाकीर्णः कन्दरोदरकूटवान्।
दक्षिणस्योदधेस्तीरे विन्ध्योऽयमिति निश्चितः॥

(वा० रा० किष्कि० 60।7)

समुद्र के तट पर प्रसन्न पक्षियों के गण से भरपूर कन्दराओं, गुफाओं और शृङ्गों से युक्त दक्षिण समुद्र के तट पर यह विन्ध्य नाम का पर्वत (विन्ध्याचल) अथवा विन्ध्य अर्थात् पर्वत (सामान्य पर्वतपर्याय) है। परन्तु यहाँ मनुस्मृति परिभाषा 'हिमालय और विन्ध्य पर्वत के बीच का देश आर्यावर्त्त है' से तो यह विन्ध्यनाम का पर्वत होना अधिक संगत है।

नगर प्रान्त—

तक्षं तक्षशिलायां पुष्कलं पुष्कलावते।
गन्धर्वदेशे रुचिरे गान्धारविषये च सः॥

(वा० रा० उत्तर० 110।11)

अंगदीया पुरी रम्याप्यङ्गदस्य निवेशिता।
चन्द्रकेतोश्च मल्लस्य मल्लभूम्यां निवेशिता॥
चन्द्रकान्तेति ख्याता दिव्या स्वर्गपुरी यथा।
अंगदं पश्चिमां भूमिं चन्द्रकेतुमुदङ्मुखम्॥
(वा० रा० उत्तर० 102। 8-11)

भरत के पुत्र तक्ष की तक्षशिला और पुष्कल का गन्धर्व देश में पुष्कलावत नगर था।

लक्ष्मण के पुत्र अंगद की कारुपथ में अंगदीया और चन्द्रकेतु की चन्द्रकान्त देश में चन्द्रकान्ता नगरी थी। अंगद पश्चिम में, चन्द्रकेतु उत्तर में हैं।

कला-कौशल और विज्ञान-विद्या

रामायण में कलाकौशल विषयक वर्णन भी पर्याप्त है, इस वर्णन से यह ज्ञात हो सकता है कि रामायण के समय कौन-कौन कला कैसी तथा किस स्थान तक पहुँच चुकी थी। उक्त वर्णन को हम निम्न आठ विभागों में देख सकते हैं-

1. गृह, शाला (मकान) और सेतु (पुल)।
2. नगर, उद्यान (बाग)।
3. आयुध (शस्त्र-अस्त्र)।
4. हस्तशिल्प।
5. यन्त्र, यान।
6. विमान।
7. विज्ञान
8. विद्या

अब हम इनका क्रमशः वर्णन करते हैं।

1. गृह, शाला (मकान), सेतु (पुल)-चूने या सफेद सीमेण्ट के मकान

कैलासशिखरोपमैः

(वा० रा० किष्कि० 33।15)

शुक्लरंग के गृहशिखरों का यहाँ वर्णन है, जो चूने या सफेद सीमेण्ट के हो सकते हैं।

आ रुरोह ततः श्रीमान् प्रासादं हिमपाण्डुरम्।

(वा० रा० युद्ध० 26।5)

रावण बरफ जैसे श्वेतरंग वाले महल पर चढ़ गया।

यह भी सफेद सीमेण्ट के प्लस्तर से बना महल स्पष्ट है।

कृतानि वेश्मानि च पाण्डुराणि।

(वा० रा० सुन्दर० 8।10)

घर श्वेत (चूने आदि के पालिश से सफेद) किए हुए थे।

मणियों से जुड़े महल—

मणिस्फटिकमुक्ताभिर्मणिकुट्टिमभूषितैः।

(वा० रा० सुन्दर० 3।9)

मणि, स्फटिक और मुक्ताओं से तथा मणिचूर्णों से जड़ित महल लंका में थे।

सात आठ मंजिल वाले घर—

सप्तभौमाष्टभौमैश्च स ददर्श महापुरीम्।
तलैः स्फटिकसंकीर्णैः।

(वा० रा० सुन्दर० 3।52)

इस वचन में लंका में सात आठ मंजिलों वाले मकान और स्फटिक जड़े हुए फर्श बतलाए हैं।

सहस्त्रखम्भों वाले महल—

यस्यां स्तम्भसहस्त्रेण प्रासादः समलंकृतः।

(वा० रा० युद्ध० 39।23)

जिस लंका में सहस्त्रों खम्भों वाला महल अर्थात् सभा-भवन (पार्लियामेण्ट हाउस जैसे) थे। यह भी कला बढ़ी-चढ़ी हुई थी जो केवल सहस्त्रों खम्भों पर मकान थे।

लतावृत, चित्रावृत, पुष्पावृत घर तथा क्रीडाघर, गृहान्तगृह, भूतलघर—

लतागृहांश्चित्रगृहान् पुष्पगृहाणि च। क्रीडागृहाणि च।
भूमीगृहांश्चैत्यगृहान् गृहान्तर्गृहानपि।।

(वा० रा० सुन्दर० 12। 1, 12, 13, 14)

लंका में रावण ने लता से घिरे घरों, चित्रों से घिरे घरों,

क्रीडाघरों, भूमिघरों, श्मशानघरों, घर में घरों को बनाया हुआ था।

भूतलगृह-भूतलनगर-

अथ प्रतिसमादिष्टो लक्ष्मणः परवीरहा।
प्रविवेश गुहां रम्यां किष्किन्धां रामशासनात्।।
स तां रत्नमयीं दिव्यां श्रीमान् पुष्पितका ननाम्।
रम्यां रत्नसमाकीर्णां ददर्श महतीं गुहाम्।।
हर्म्यप्रासादसंबाधां नानापथोपशोभिताम्।
सर्वकामफलैर्वृक्षैः पुष्पितैरुपशोभिताम्।।

(वा० रा० किष्कि० 33।1-5)

राम के आदेश से लक्ष्मण ने महती तथा रमणीय किष्किन्धा नाम की भूतलनगरी में प्रवेश किया जिसमें सुन्दर महल और दुकानें, बाजार शोभित तथा फूलों के बाग और अच्छे फल देने वाले वृक्ष थे।

यहाँ भूतल में निर्माणकला का उच्चतम आविष्कार स्पष्ट होता है जैसे आजकल लन्दन आदि में भी भूतल नगर हैं। हैदराबाद दक्षिण में प्राचीन समय की एलोरा, अजन्ता की गुफाएं भी इस पुरातन कला का उदाहरण हैं।

सेतु बनाना-

नलश्चक्रे महासेतुं मध्ये नदनदीपतेः।

(वा० रा० युद्ध० 22।62)

नल ने महासेतु समुद्र के मध्य में बनवाया।

ब्रह्मा (इंजीनियर)

उक्त गृहशाला, प्रासाद, सेतु आदि के निर्माण कराने वाले इंजीनियरों का भी रामायण में वर्णन मिलता है।

तानि प्रयत्नाभिसमाहतानि मयेन साक्षादिव निर्मितानि।

(वा० रा० सुन्दर० 6।4)

मय इंजीनियर के द्वारा प्रयत्न से निर्मित कराए हुए भवन थे।

पुरस्ताद् ऋषभो नीलो वीरः कुसुद एव च।
पन्थानं शोधयन्ति स्म वानरैर्बहुभिः सह॥

(वा० रा० युद्ध० 4।32)

यहाँ कहा गया है कि ऋषभ, नील, कुमुद ये तीन मार्ग बनाने वाले इंजीनियर थे। चौथे नल ने तो समुद्र पर सेतु बनाया था। यह सेतु प्रकरण में बतला आए हैं। नल विश्वकर्मा का पुत्र था।

विश्वकर्मसुतो वीरो नलः प्लवगसत्तर्मः।

(वा० रा० युद्ध० 30-34)

नगर, उद्यान–

रामायणकाल में नगर, नगरी, पुरी का विशेषज्ञ इंजीनियर द्वारा निर्माण भी होता था, जैसे लंका को विश्वकर्मा ने बनवाया था–

लंकामीक्षस्व वैदेहि निर्मितां विश्वकर्मणाः।

(वा० रा० युद्ध० 117।3)

भूतल नगर–

भूतलगृह के प्रकरण में बतला आए हैं कि किष्किन्धा नाम कील नगरी गुह्य रूप में भूमि के अन्दर बसी थी। वहाँ उसमें सुन्दर-सुन्दर मकान और बाजार थे। फूलों के बगीचे और वृक्ष भी स्थान-स्थान पर लगे थे। लन्दन जैसी भूतल नगर निर्माण कला केवल आजकल की ही पाश्चात्य विद्वानों की नहीं, अपितु प्राचीन समय में भी भूतलनगर निर्माणकला रामायणकाल में भी थी। भारतीय गुहा नगरी हैदारबाद दक्षिण में औरंगाबाद जिले में एलोरा, अजन्ता नाम से प्रसिद्ध हैं ही जहाँ तीन मील तक पर्वत खोद कर विशाल महल एक

मंजिले, तिमंजिले तक बने हैं।

उद्यानकला—

काननैः कृत्रिमैश्चापि सर्वतः समलङ्कृतः।

(वा० रा० सु० 14।35)

कृत्रिम जगलों अर्थात् उद्यानों बगीचों से सुशोभित लकांपुरी विश्वकर्मा ने बनाई थी।

भूतल उद्यान—

भूतलनगर प्रसंग में भूतलपुष्पवाटिका तथा क्वचित्-क्वचित् वृक्ष तो आए हैं अब भूतल महान् जंगल भी देखिये—

इत्युक्त्वा तद्बिलं सर्वे विविशुस्तिमिरावृतम्।
अचन्द्रसूर्यं हरयो ददृशू रोमहर्षणम्।।
ततस्ते देशमागम्य सौम्या वितिमिरं वनम्।
ददृशुः काञ्चनान् वृक्षान् दीप्तवैश्वानरप्रभान्।।

(वा० रा० किष्कि० 50।17, 24)

हनुमान् के साथ सुग्रीव के अनेक सैनिक सीता की खोज करते हुए एक भूमिद्वार में प्रविष्ट हुए। प्रथम उन्हें घना अन्धेरा पड़ा फिर प्रकाशवाला वनस्थल मिला जहाँ सुनहरे तथा चमकदार वृक्ष थे।

यह प्राचीन भूतलकला की उन्नति के उदाहरण हैं जिसमें भूतल उद्यान (बाग) तक थे।

आयुध (शस्त्र-अस्त्र)

रामायण में आयुधों शस्त्रास्त्रों के सम्बन्ध में भी पर्याप्त ऊँची कोटि का वर्णन है।

शतघ्नी (तोप) आदि—

सर्वयन्त्रायुधवतीं..............................।10।
शतघ्नीशतसुकुलाम्   अयोध्याम्।।11

(वा० रा० बाल० 5।10–11)

अयोध्या नगरी सब यन्त्रायुधों से अथवा यन्त्रों और आयुधों से युक्त थी तथा सैकड़ों तोपों से युक्त थी।

अस्त्र–

लक्ष्मणस्य च नाराचा बहवः सन्ति तद्विधाः।
वज्राग्निसमस्पर्शा गिरीणमपि दारकाः।।

(वा० रा० किष्कि० 54।15)

लक्ष्मण के 'नाराच' जैसे अस्त्र बहुत हैं जो वज्र और विद्युत् की भाँति चोट करने वाले हैं तथा पर्वतों को तोड़ देने वाले हैं।

यहाँ वज्र और विद्युत् जैसे प्रहारकारी एवं पर्वतों को तोड़ देने वाले वर्णन से ये नाराच अस्त्र स्फोटक बम जैसे होंगे।

रौद्रेण कश्चिदस्त्रेण रामेण निहितं रणे।

(वा० रा० सु० 36।27)

यहाँ राम के रौद्र अस्त्र का वर्णन है।

अथ दाशरथी रामो रौद्रमस्त्रं प्रयोजयन्।

(वा० रा० यु० 67।118)

यहाँ भी राम के रौद्र अस्त्र का वर्णन है।

ब्राह्मेणास्त्रेण...ब्राह्ममस्त्रम्।

(वा० रा० यु० 71। 99, 100)

यहाँ ब्राह्म, रौद्र, वायव्य, वारुण अस्त्रों का वर्णन है।

अस्त्र फेंके जाने वाले प्रयोग का नाम है, वायव्य-वायु अर्थात् विषवायु फेंकने वाले, वारुण–वरुण भाव धुन्धलापन धुआँ फेंकने वाले हैं। स्पष्ट है, रौद्र अग्नि फेंकने वाले, ब्राह्म अस्त्र भी विशेष अस्त्र हैं।

राम ने उन सर्पास्त्रों को गिरते हुए देख उनका प्रतिकार करने वाला गारुत्मत अस्त्र छोड़ा।

आठ बमों वाला अस्त्र–

तद्रावणकरान्मुक्तं विद्युन्मालासमाहतम्।
अष्टघण्टं महानादं वियद्गतमशोभत॥

(वा० रा० युद्ध० 102।61)

रावण के हाथ से छूटा हुआ, विद्युत की तरंगों से घिरा हुआ, आठ दीप्त बमों वाला, महानादकारी अस्त्र आकाश में चमका।

बाण का पुनः लौट आना–

सायकस्तु मुहूर्तेन तालान् भित्त्वा महाजवः।
निष्पत्य च पुनस्तूणं तमेव प्रविवेश ह॥

(वा० रा० किष्कि० 12।4)

महावेगवान् वाण तुरन्त तालों को भेद कर पुनः तूण को प्रविष्ट हो गया।

तं समुत्सृज्य सा शक्तिः सौमित्रिं युधि निर्जितम्।
रावणस्य रथे तस्मिन् स्थानं पुनरुपागमत्॥

(वा० रा० युद्ध० 59।121)

रावण का फेंका हुआ शक्ति नामक अस्त्र लक्ष्मण पर प्रहार करके पुनः लौट आया।

अन्य आयुध–

तत्रेषूपलयन्त्राणि बलवन्ति महान्ति च...
शतघ्न्यो रक्षसां गणैः.....यन्त्रैरुपेता...
यन्त्रैस्तैरवकीर्यन्ते परिखासु समन्ततः॥

(वा० रा० युद्ध० 3।12, 13, 16, 17)

यहाँ इषु, उपल (गोलों) को फेंकने वाले यन्त्रों तथा तोपों का वर्णन हैं।

हस्तशिल्प–

रामायणकाल में विविध हस्तशिल्प भी ऊँचे पद पर

पहुँचे हुए थे जिसका उल्लेख यहाँ किया जाता है।

दाँत बनाने वाले—

दन्तकाराः सुधाकारा ये च गन्धोपजीविनः।

(वा० रा० अयो० 84।13)

यहाँ अयोध्यानगरी के शिल्पियों की गणना में 'दन्तकाराः' दाँत बनाने वाले भी गिनाए गये हैं।

अंगराग अनुलेपन—

अङ्गरागं च वैदेहि महार्हमनुलेपनम्।
मया दत्तमिदं सीते तव गात्राणि शोभयेत्॥

(वा० रा० अयो० 118। 18-19)

अत्रि ऋषि की पत्नी अनसूया सीता को अंगराग अनुलेपन (अंगों को सुन्दर रंग देने वाला पालिश) देती हुई कहती है कि हे सीता! यह मेरा दिया अंगराग-अनुलेपन बहुमूल्य लो, यह तुम्हारे अंगों को शोभित कर देगा, रंगवाला बना देगा।

बहुत शलाकाओं का छाता—

इदं बहुशलाकं ते पूर्णचन्द्रमिवोदितम्।
छत्रं सबालव्यजनं प्रतीच्छस्व मया धृतम्॥

(वा० रा० किष्कि० 10।3)

यह बहुत शलाकाओं वाला छाता पूर्णचन्द्र की भाँति है इसे हे सीता! लो।

सूक्ष्म शलाकाओं का छाता—

यत्रैतदिन्दुप्रतिमं विभातिच्छत्रं सितं सूक्ष्मशलाकमग्र्यम्।

(वा० रा० युद्ध० 59।24)

जहाँ यह चन्द्रमा के समान सूक्ष्म शलाकाओं का आभावाला शुभ उत्तम छाता चमकता है।

स्फटिक (बिल्लौर) तथा मणियों एवं सोने के बर्तन—

हिरण्मयैश्च विविधैर्भाजनैः स्फाटिकैरपि।(वा० रा० सु० 11।21)

सुनहरे एवं स्फटिक के बने विविध बर्तनों से सुशोभित भूमिस्थल थे।

गृहं मणिभाजनसंकुलम्।

(वा० रा० सुन्दर० 1।36)

हनुमान ने रावण का घर मणियों के बर्तनों से युक्त देखा। स्फटिक के गवाक्ष–

अमो मयूराः शोभन्ते प्रनृत्यन्तस्ततस्ततः।
स्वैः पक्षैः पवनोद्धूतैर्गवाक्षैः स्फाटिकैरिव।।

(वा० रा० किष्कि० 1।36)

यहाँ नाचते हुए मोरों के पक्षों में वायु से उठे हुओं को स्फटिक के गवाक्षों की उपमा देने से स्फटिक के गवाक्षों का उस काल में होना सिद्ध होता है।

लंका में हण्डे एवं बिजली के लैम्प–

तां नष्टतिमिरां दीपैर्भास्वरैश्च महागृहैः।
नगरीं राक्षसेन्द्रस्य ददर्श स महाकपिः।

(वा० रा० सुन्दर० 3।19)

हनुमान ने उस लंका को अन्धकार से रहित देखा जहाँ महागृहों बड़े बर्तनों वाले–बड़े हण्डों वाले, भास्वर अति तीव्र प्रकाश फेंकने वाले बड़े घर अर्थात् बिजलीघर थे।

सोने-चाँदी का पालिश–

काञ्चनानि विमानानि राजतानि गृहाणि च।

(वा० रा० किष्कि० 51।5)

हनुमान् कहते हैं कि लंका में सुनहरे (सोने के रंग चढ़े, सोने के पालिश किए) निमान और चाँदी के रंग चढ़े (चाँदी की पालिश) के घर थे।

विमानं सर्वतो रजतप्रभम्।

(वा० रा० सुन्दर० 121।14)

पुष्पक विमान पर सर्वत्र चाँदी जैसा पालिश था।

सोने चाँदी के पलंग आदि—

हैमराजतपर्यंकैर्बहुभिश्च वरासनैः।

(वा० रा० सुन्दर० 33।20)

सोने चाँदी के पलंग और पीठासन आदि से लंका सुशोभित थी।

मुहर या खुदाई—

रामनामाङ्कितं चेदं पश्य देव्यङ्गुलीयकम्।

(वा० रा० सुन्दर० 36।24)

हनुमान् ने सीता को कहा कि राम की पहिचान राम नाम से अङ्कित अँगूठी देखो।

अँगूठी में राम का नाम खुदा था या ढला था। राम के हस्ताक्षर का ज्यों का त्यों खोदना भी कला है।

कृत्रिम मृग—

सौवर्णस्त्वं मृगो भूत्वा चित्रो रजतविन्दुभिः।
आश्रमे तस्य रामस्य सीतायाः प्रमुखे चर॥

(वा० रा० अरण्य० 35।18)

रावण मारीच को कहता है कि तू चित्रविन्दुवाला सुनहरा मृग बन कर राम के आश्रम पर सीता के सम्मुख विचर।

दीप्तिजिह्वो महाकायस्तीक्ष्णदंष्ट्रो महाबलः।
व्यचरं दण्डकारण्यं मांसभक्षो महामृगः॥

(वा० रा० अरण्य० 39।3)

मारीच ने कैसा मृगरूप बनाया था यह रावण को बतलाता है कि 'लपलपाती जिह्वावाला महाकाय तीक्ष्ण दान्तों वाला महाबली मांसमक्षक महामृग का रूप बनाकर दण्डकारण्य में विचरता था।

राम का कृत्रिम शिर—

मोहयिष्यावहे सीतां मायया जनकात्मजाम्।
शिरो मायामयं गृह्य राघवस्य निशाचर॥
मां त्वमुपतिष्ठस्व महच्च सशरं धनुः॥

(वा० रा० युद्ध० 31।8)

रावण मधुजिह्व राक्षस को आज्ञा देता है कि तू राम का मायामय अर्थात् कृत्रिम शिर बनाकर ला जिसमें शरसहित धनुष के साथ हो, हम सीता को धोखा देंगे।

कृत्रिम सीता—

इन्द्रजित्तु रथे स्थाप्य सीतां मायामयीं तदा।
बलेन महतावृत्य तस्या वधमरोचयत्॥

(वा० रा० युद्ध० 81।5)

इन्द्रजित् मायामयी कृत्रिम सीता को रथ में लाकर संग्राम स्थल में राम के सम्मुख बड़े बल से घेर कर उसका वध करने लगा।

इस प्रकार रामायणकाल में किसी मनुष्य का ज्यों का त्यों मुख अपितु पूर्ण शरीर बनाने यथावत् आकृति गति और रंगरूप करने की बड़ी महत्त्वपूर्ण कला थी।

यन्त्र तथा यन्त्रयान—

रामायण में यन्त्रों और यन्त्रयानों का भी वर्णन मिलता है। यन्त्र का वर्णन बहुत स्थलों पर आता है जैसे "सर्वयन्त्रायुधवतीं...अयोध्याम्" (वा० रा० बाल० 5।10) परन्तु यहाँ वे ही स्थल दिए जायेंगे जहाँ विशेष प्रयोजन या उपयोग के साथ उसका वर्णन हो।

भारी चट्टानों को उठाने वाले यन्त्र—

हस्तिमात्रान् महाकायः पाषाणांश्च महाबलाः।
पर्वतांश्च समुत्पाट्य यन्त्रैः परिवहन्ति च॥

(वा० रा० युद्ध० 22।29)

हाथी के बराबर बड़े-बड़े पत्थरों और पर्वत चट्टानों को उखेड़ यन्त्रों से पुल बनाने के लिए लाते थे।

जैसे आजकल यन्त्रों से भार उठाते और ले जाते हैं ऐसा ही कार्य यहाँ भी यन्त्रों का कहा गया है।

भूतलनगर से तुरन्त बाहर ले आने वाला विद्युत्सोपान सदृश यन्त्र–

सीता की खोज करते हुए हनुमान् सहित वानर सैनिक जन किसी भूतल नगर में उसके किसी द्वार से अंदर चले गये। अंदर घूमते-घूमते निकलने का रास्ता भूल गये। पुनः वहाँ की एक स्वयंप्रभा नाम की रक्षिका से बाहर निकलने की प्रार्थना की। उसने उन्हें निमेष भर में विद्युत् के सोपान (जीने) जैसे यन्त्र द्वारा बाहर निकाल दिया, वह वर्णन निम्न प्रकार है–

निमीलयत चक्षूंषि सर्वे वानरापुङ्गवाः।
नहि निष्क्रमितुं शक्यमनिमीलितलोचनैः।।
ततो निमीलिताः सर्वे सुकुमाराङ्गुलैः करैः।।
सहसाऽपिदधुर्दृष्टिं हृष्टा गमनकांक्षया।।
वानरास्तु महात्मानो हस्तरुद्धमुखास्तदा।
निमेषान्तरमात्रेण बिलादुत्तारितास्तया।।

(वा० रा० किष्कि० 52। 25।29)

हनुमान् आदि को उस रक्षिका द्वारपालिका स्वयम्प्रभा ने कहा कि 'तुम सब आँखें बन्द कर लो। बिना आँखें बन्द किए यहाँ से बाहर नहीं निकल सकते (भेद का पता उन्हें न लगे इसलिये आँखें बन्द कराई गईं)।' फिर उन वानर-सैनिकों ने अपने हाथों से अपनी आँखें बन्द कर लीं। पुनः उस द्वारपालिका ने उन्हें उस भूतलनगर-बिल से बाहर उतार दिया।

जैसे आजकल विद्युत् की सीढ़ी या बिजली का पिंजरा होता है उस में बैठ जाने से तुरन्त नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे उतर जाते हैं ऐसे ही प्रकार के यन्त्र पिंजरे सदृश पीठासन या स्थण्डिल यन्त्र का यहाँ वर्णन है।

यान-यन्त्रयान-

रावण के पास विमान तो था ही जो आकाश में उड़ता था परन्तु उसके पास एक यान (यन्त्रयान) भी था जो भूमि पर वेग से चल सके-

सहस्त्रखरसंयुक्तो रथा मेधसमस्वनः।

(वा० रा० युद्ध० 69।4)

यहाँ कहा गया है कि रावण के पास सहस्त्रखरों से युक्त मेघ के समान गर्जन ध्वनि करने वाला यान था।

यहाँ सहस्त्रखरों का युक्त होना रथ में कहा है, खर का अर्थ लौकिक भाषा में गधा है, सो हजारों गधे जिस में जुड़ते हों ऐसा अर्थ किया जाता है-परन्तु हजारों गधों को जोड़ना, उनका सँभालना असम्भव है। और फिर वेग से ले चलने के लिये भी हों तो घोड़े क्यों न जोड़े जाएं? गधों से तो घोड़े अधिक वेगवान् होते हैं। यहाँ वास्तविक बात कुछ और है, वह यह कि यहाँ के खर प्राणी विशेष (गधे) नहीं है अपितु आधिदैविक पदार्थ है। कहा भी है "अश्विनोः खराः" (निघं० 1।15) अर्थात् अश्विनौ के उपयोजन खर हैं, अश्विनौ के लिये कहा है कि "ज्योतिषाऽन्यः, रसौनान्यः" (निरुक्त०) एक ज्योतिर्मय है दूसरा रसमय है। इन्हें आग और पानी भी कह सकते हैं, विद्युत् और वायु या वायव्य सम्पादक पदार्थ तेल (पैट्रोल जैसा) भी कह सकते हैं या विद्युत् के धन-ऋण भेद भी कह सकते हैं, स्वयं रामायण में भी उक्त दो विद्युत् भेदों का वर्णन आया है उनमें एक सूखी दूसरी गीली विद्युत्

कही है **"अशनी द्वे प्रयच्छामि शुष्कार्दे रघुनन्दन"** (वा० रा० 27।9) विश्वामित्र द्वारा अस्त्र प्रदान प्रकरण में कहा गया है कि हे राम! तुझे मैं सूखी और गीली दो विद्युत् देता हूँ। बस अब खर का अर्थ आग और पानी की सम्मिलित शक्तियाँ या विद्युत् और वायव्य-सम्पदक तेल (पैट्रोल जैसे) के सम्मिलित वेग या विद्युत् मात्र की धाराएँ कह सकते हैं इन शक्तियों से चलने वाला रावण का रथ यन्त्रयान था।

विमान (वायुयान)–

रामायण के अन्दर विमान (वायुयान) के सम्बन्ध में स्थान-स्थान पर वर्णन आता है जिनको निदर्शन के लिये यहाँ दिया जाता है।

सवारी का पुष्पक विमान–

कैलासपर्वतं गत्वा विजित्य नरवाहनम्।
विमानं पुष्पकं तस्य कामगं वै जहार यः॥

(वा० रा० अरण्य० 31।14)

कैलास पर्वत पर जाकर वहाँ सवारी के ले जाने वाले पुष्पक नाम के विमान को लाया।

यस्य तत्पुष्पकं नाम विमानं कामगं शुभम्।
वीर्यादावर्जित भद्रे येन यामि विहायसम्॥

(वा० रा० अरण्य० 48।6)

रावण सीता से कहता है कि हे सीता! सुन्दर पुष्पक विमान विश्रवण का था जिसे मैं बल से जीतकर लाया हूँ इस से मैं आकाश में जाता हूँ।

स तस्य मध्ये भवनस्य संस्थितो महद्विमानं मणिरत्न-चित्रितम्। प्रतप्तजाम्बूनदजालकृत्रिमं ददर्श धीमान् पवनात्मजः कपिः॥ तद्प्रमेयप्रतीकारकृत्रिमं कृतं स्वयं साध्विति विश्वकमर्णा। दिवं गते वायुपथे प्रतिष्ठितं

व्यराजतादित्यपथस्य लक्ष्मवत्॥ स पुष्पकं तत्र विमान-मुत्तमं ददर्श तद्वानरवीरसत्तमः।

(वा० रा० सुन्दर० 8। 1-2, 8)

हनुमान् ने लंका में रावणनिवास स्थान में मणिरत्नों से जड़ित स्वर्णतारों की जालियाँ जिसमें लगी थीं जिसकी तुलना नहीं हो सकती। उसके आकाश में उड़ने पर वायु मार्ग में विराजमान सूर्य पथ में चिह्न की भाँति दिखाई देने वाले पुष्पक विमान को देखा।

जालवातायनैर्युक्तं काञ्चनैः स्फाटिकैरपि।

(वा० रा० सुन्दर० 9।16)

वह पुष्पक विमान सोने की जालियों और स्फटिक मणि की खिड़कियों से युक्त था।

पुष्पक विमान की गति—

अह्नां त्वां प्रापयिष्यामि तां पुरीं पार्थिवात्मज।
पुष्पकं नाम भद्रं ते विमानं सूर्यसन्निभम्॥

(वा० रा० युद्ध० 121।8-9)

विभीषण राम को कहता है— "हे राम! मैं तुम्हें एक दिन में—दिन के अन्दर आठ-दस घण्टों में अयोध्या पुष्पक विमान से पहुँचा दूँगा।" उक्त कथन में पुष्पक विमान की गति घण्टे में अढ़ाई सौ मील लगभग थी। विदित हो यह पुष्पक विमान एक भारी विमान सैकड़ों सवारी ले जाने वाला था। क्योंकि श्रीराम लक्ष्मण, सीता, विभीषण, सुग्रीव तथा अनेक सैनिक भी बैठकर अयोध्या आए थे। उस ऐसे भारी विमान की गति घण्टे में अढ़ाई सौ मील थी। इस तुलना से यदि छोटा-सा विमान होता तो उस समय उसकी उड़ान घण्टे में उस से कई गुणा हो सकती थी।

ज्ञात होता है कि छोटे-छोटे विमान या उड़ने के साधन वहाँ लंका में अधिक थे। विभीषण भी राम के पास उड़कर ही आया था। किन्तु पुष्पक विमान बहुत ही बड़ा था जिसमें कुछ सेना भी बैठ सकती थी जैसे आजकल सैनिक विमान होते हैं। पुष्पक विमान में कोई एक हंसयन्त्र या हंसाकार का अग्रभाग लगा था और बीच में रेल के समान डब्बे या बैठने के स्थान होंगे। रामायण की विमानकला भी बढ़ी चढ़ी थी।

विज्ञान-

रामायणकाल में विज्ञान का उल्लेख मिलता है कि उस समय विज्ञान बहुत ऊँची स्थिति में था, इसके एक-दो उदाहरण यहाँ दिए जाते हैं।

विद्युत् की दो धाराएं या उसके धन-ऋण दो भेद-

अशनी द्वे प्रयच्छामि शुष्कार्द्रे रघुनन्दन।

(वा० रा० बाल० 27।9)

राम को अस्त्रप्रदान प्रकरण में विश्वामित्र ऋषि राम से कहते हैं-"हे राम! शुष्क आर्द्र ये दो विद्युत् देता हूँ।" ये शुष्क और आर्द्र विद्युत् के भेद धन और ऋण हो सकते हैं। पाश्चात्य विज्ञान-परिभाषा में पोजिटिव और नेगेटिव समझनी चाहिए, इनके शुष्क और आर्द्र ये प्राचीन पारिभाषिक नाम हैं।

बिजली की बत्तियाँ-

तां नष्टतिमिरां दीप्तैर्भास्वरैश्चमहागृहैः।
नगरीं राक्षसेन्द्रस्य ददर्श महाकपिः।

(वा० रा० सुन्दर० 3।19)

हनुमान् ने उस लंका को अन्धकार रहित देखा जहाँ कि चमकते हुए प्रकाश फेंकने वाले घर (बिजलीघर) थे।

अन्य विद्याएँ–

रामायण में अन्य विद्याओं के भी बहुत कुछ उदाहरण मिलते हैं जिनमें से कुछ यहाँ दिए जाते हैं–

शव (मुर्दे) को ज्यों का त्यों बनाए रखने की विद्या–

बालस्य च शरीरं तत्तैलद्रोण्यां निधापय।
गन्धैश्च परमोदारैस्तैलैश्च सुसुगन्धिभिः॥
यथा न क्षीयते बालस्तथा सौम्य विधीयताम्।
विपत्तिः परिभेदो वा न भवच्च तथा कुरु॥

(वा० रा० उत्तर० 75। 1-4)

राम के राज्य में एक ब्राह्मण का बालक मर गया था। उस मरे बालक को यथावत् रखने के लिये राम ने आदेश दिया कि 'बालक का शरीर तेल की द्रोणी में रखो। उस में गन्धचूर्ण एवं सुसुगन्ध वाले परमोदार तेल अर्थात् इतर भी डालो जिससे बालक क्षीण न हो, न रंगरूप स्वरूप का बिगाड़ हो और न कहीं से मांस फटे, नहीं सन्धि टूटे।

ज्योतिष-विषयक बातों का रामायण में वर्णन मिलता है।

सूर्य में काला धब्बा–

आदित्ये विमले नीलं लक्ष्म लक्ष्मण दृश्यते।

(वा० रा० युद्ध० 23।10)

राम कहते हैं कि 'हे लक्ष्मण! विमल सूर्य में नीला धब्बा दिखलाई पड़ता है।'

इस प्रकार सूर्य में काला धब्बा (Sun spots) राम ने देखा।

दूरवीक्षण (दूरबीन Telescope) जैसा साधन–

यत्नेन महता भूयो भास्करः प्रतिलोकितः।
तुल्यपृथिवीप्रमाणेन भास्करः प्रतिभाति नौ॥

(वा० रा० किष्कि० 61।13)

सम्पाति राम से कहता है कि बड़े यत्न से फिर हमने सूर्य को देखा जो पृथ्वी जैसा बड़ा था।

यहाँ पृथिवी जैसा बड़ा कहने से अत्युक्ति हो सकती है पर उसका बृहदाकार दिखलाई पड़ा इसमें कोई क्षति नहीं।

पृथ्वी से चन्द्रमा की दूरी–

अशीति तु सहस्त्राणि योजनानां प्रमाणतः।
चन्द्रमातिस्तष्ठते यत्र नक्षत्रसंग्रहसंयुतः॥

(वा० रा० उत्तर० 23।16)

यहाँ कहा गया है कि चन्द्रमा अस्सी हजार योजन अर्थात् 320000 कोश अर्थात् चार लाख मील दूर है, पाश्चात्य ज्योतिषीजन इसकी मध्य दूरी अढ़ाई लाख मील दूर बतलाते हैं–पता चला है कि चन्द्रमा पृथ्वी के चारों ओर वृत में नहीं दीर्घ वृत में परिक्रमा करता है इसलिये इसकी दूरी घटा बढ़ा करती है, इसको मध्यम दूरी अढ़ाई लाख मील से कुछ कम है। (सौर परिवार। पृ० 407) रामायण में चार लाख मील दूर कहा है। हो सकता है रामायण का माप दीर्घवृत की लम्बाई से हो। खैर! इतना तो रामायण के वचन से विदित होता है कि रामायणकाल में ग्रहों की दूरी जाँचने की विद्या वर्तमान थी।

हनुमान् आदि के सम्बन्ध में एक शंका पर विचार

शंका—हनुमान् आदि सुग्रीव पक्षीय व्यक्तियों को वानर अर्थात् बन्दर कहा जाता है, क्या वे बन्दर थे या मनुष्य? यदि मनुष्य थे तो उनके पूँछ का वर्णन कैसे?

विचार—हनुमान् आदि वानर तो कहे जाते थे पर इतने मात्र से बन्दर थे ऐसा नहीं माना जा सकता, कारण कि नर मनुष्य को कहते हैं 'वा–नर' विकल्प से नर अर्थात् नरों की भाँति प्रसिद्ध नगर निवास न करके गिरि पर्वतों की गुहाओं में भूतल गृहों में रहने वाले होने से वे वानर कहे जाते हों जैसे रूस में गोरिल्ला सेना और सैनिक आजकल भी वर्तमान हैं। वानर उनका कर्मनाम हो सकता है। हाँ, उनके पूँछ होने का वर्णन अवश्य वाल्मीकि रामायण में आता है। इससे यदि उनको बन्दर ही कहा जाए तो यह भी बहुत ही चिन्तनीय है कारण कि उनके ऐसे वर्णन बहुत आते हैं, जो बन्दर होने के प्रतिकूल हैं और मनुष्य होने को सिद्ध करते हैं जैसे राम के साथ उनका वार्तालाप करना और उनमें मित्रता होना तो है ही पर साथ में उनका राज्यभार सँभालना, वेद व्याकरण का ज्ञाता होना, अस्त्रविद्या में कुशलता, प्राकृत बन्दरों से भिन्न बताया जाना आदि। उक्त ऐसे स्थल देखने योग्य हैं, नीचे दिए जाते हैं—

सुग्रीव को राजा कहा जाना और शासन भार सँभालना—

ह्यबुद्धिं गतो राजा सर्वभूतानि शास्ति हि।

(वा० रा० किष्कि० 2।18)

जिस समय राम लक्ष्मण सुग्रीव के निवास वन में विचर

रहे थे तो सुग्रीव बहुत डरा उसने समझा कि ये बाली के पक्षी के हैं तब हनुमान् समझाता है– "भय मत करो बुद्धि से काम लो अबुद्धि को प्राप्त होकर राजा सब प्रजा का शासन नहीं कर सकता।"

सुग्रीव अपने को मनुष्य कहता है–

बालिप्रणिहितावेव शङ्केऽहं पुरुषोत्तमौ।
राजानो बहुमित्राश्च विश्वासो नात्र हि क्षमः॥
अरयश्च मनुष्येण विज्ञेयाश्छद्मचारिणः।

(वा० रा० किष्कि० 2।12)

पुनः सुग्रीव हनुमान् को कहता है कि ये दोनों उत्तम जन अवश्य बाली के भेजे हुए हैं क्योंकि राजा लोग बहुत मित्र वाले होते हैं। यहाँ विश्वास न करना चाहिये, शत्रुजन छल से काम लेते हैं यह मनुष्य को जान लेना चाहिये। इस वचन में सुग्रीव ने अपने को मनुष्य कहा है।

हनुमान का वेद और व्याकरण का पढ़ा हुआ होना–

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेवं प्रभाषितुम॥
नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्॥

(वा० रा० किष्कि० 3। 29–30)

राम हनुमान् के सम्बन्ध में कहते हैं–विना ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद का विद्वान् हुए ऐसा नहीं बोल सकता, निश्चय उसने व्याकरण भी बहुत पढ़ा है।

बन्दर का वेद और व्याकरण पढ़ना असम्भव है मनुष्य ही पढ़ सकता है।

अस्त्रविद्या में कुशल होना–

कृतास्त्रैः सवगैः शक्तैर्भवद्भिर्विजयैषिभिः।

(वा० रा० सुन्दर० 60।70)

यहाँ वानरों को अस्त्रविद्याकुशल कहा गया है जो मनुष्य ही हो सकते हैं।

हनुमान् स्वाभाविक वानर न था—

स वृक्षखण्डान् तरसा जहार शैलात् शिलाः।
प्राकृतवानराँस्तथा।।

(वा० रा० युद्ध० 74।86)

हनुमान् जब संजीवनी ओषधि लेने गया तो उसने वृक्ष के टहनों, पर्वतभागों, शिलाओं तथा प्राकृत वानरों (अर्थात् स्वाभाविक वानरों-जन्म के बन्दरों) को छिन्न-भिन्न कर दिया।

उक्त कथन से स्पष्ट है कि हनुमान् प्राकृत वानर (जन्म का बन्दर) नहीं है।

सुग्रीव आदि के चारों वर्ण—

पण्या पण्यवतो दुर्गा चातुर्वर्ण्यपुरस्कृता।

(वा० रा० उत्तर० 17। 7, 1।48)

सुग्रीव आदि वानरों की किष्किन्धा गुहा (भूतल नगरी) प्रशंसनीया क्रयविक्रय योग्य साधनवाली दुर्गमनीया चारों वर्णों से सुशोभित थी।

किष्किन्धा गुहा में सुग्रीव आदि वानर थे, उनमें चारों वर्णों की व्यवस्था मनुष्य होने पर ही तो हो सकती है बन्दर होने पर नहीं।

उपर्युक्त वर्णन में हनुमान् आदि का मनुष्य जाति में से होना सिद्ध होता है। अब रहा पूँछ का प्रश्न सो इसके सम्बन्ध में निम्न प्रकार विचार किया जा सकता है—

हनुमान् आदि की पूँछ का विवेचन करने के लिये प्रथम रामायण का ऐसा वचन यहाँ दे देते हैं जिसमें हनुमान् का वानरवेश को छोड़कर मनुष्य रूप में आना दर्शाया है—

कपिरूपं परित्यज्य हनुमान् मारुतात्मजः।
भिक्षुरूपं ततो भेजे शठबुद्धितया कपिः॥

(वा० रा० किष्कि० 3।2)

हनुमान् ने राम लक्ष्मण के पास जाने के लिए बन्दर रूप को छोड़कर भिक्षु रूप संन्यासी का रूप बनाया।

स कृत्वा मानुषं रूपं सुग्रीवः प्लवगर्षभः।
दर्शनीयतमो भूत्वा प्रतीत्योवाच राघवम्॥

(वा० रा० किष्कि० 5। 9)

सुग्रीव मनुष्य रूप धारण करके राम से बोला—

हनुमान् और सुग्रीव का इस प्रकार बन्दर रूप को छोड़कर मनुष्य रूप में आना सिद्ध करता है कि हनुमान् आदि का जो वानररूप था वह छोड़ा जाने वाला होने से जन्म का नहीं था किन्तु कृत्रिम था। जब कि कृत्रिम बन्दर का रूप उन्होंने बनाया हुआ था तब पूँछ का होना अनिवार्य हुआ। बन्दर का वेश उन्होंने अपना क्यों बनाया हुआ था? इसके कारण अनेक हो सकते हैं। राजनैतिक चाल से नागरिक नर सम्राटों के या राक्षसों के भय से उन्होंने वानरवेश धारण किया हो या सैनिक वेश के लिए हो। आजकल विषैली गैस छोड़ने वाले सैनिकों का वेश हाथी जैसा हो जाता है, मुख के आगे नाक के साथ लंबी सूँड़ (मास्क) श्वास लेने को लगी रहती है। इस सेना को हाथी पलटन कह सकते हैं जैसे घाघरा पहनने वाली पलटन घाघरा पलटन कहलाती और चोटी पलटन भी एक है जिनकी टोपियों के पीछे चोटी लगी रहती है। हनुमान् आदि की पूँछ कोई अस्त्र विशेष का साधन भी हो जैसे आजकल के सैनिक बन्दूक पीछे लटकाये रहते हैं, यदि वह बन्दूक और ऊपर हो तो पूँछ सी लगेगी, जिसे वे धारण करने के कारण

ही पूँछ वाले होने से वानर कहलाए गये हों, पूँछ में स्प्रिंग और विद्युत् का प्रयोग हो उस से वे यथेष्ट उछल सकते हों और शत्रु पर प्रहार कर सकते हों। हनुमान की स्थान-स्थान पर विद्युत् से उपमा तो दी ही है-

निमेषान्तरेण निरालम्बनमम्बरम्।
सहसा निपतिष्यामि घनाद् विद्युदिवोत्थिता।।

(वा० रा० किष्कि० 67।25)

हनुमान कहता है कि एक निमेषमात्र से निरालम्बन आकाश में सहसा गति करूँगा, मेघ से उठी विद्युत् की तरह।

खे यथा निपतत्युल्का उत्तरान्ताद्विनिःसृता।
दृश्यते सानुबन्धा च तथा स कपिकुञ्जरः।।

(वा० रा० सु० 1।66)

हनुमान् आकाश में ऐसे चला जैसे पूँछ सहित उल्का गति करती है।

विचचाराम्बरे वीरः परिगृह्य च मारुतिः।
सूदयमास वज्रेण दैत्यानिव सहस्रदृक्।।

(वा० रा० सु० 43।40)

हनुमान् आकाश में उड़ा और वज्र से राक्षसों को ऐसे हिंसित किया जैसे इन्द्र ने दैत्यों को।

निपपात महावेगी विद्युद्राशिर्गिराविव।

(वा० रा० सु० 46।25)

महावेगवान् हनुमान् राक्षसों पर टूटा जैसे पर्वत पर विद्युत्।

इससे हनुमान् आदि की पूँछ अस्त्रविशेष का साधन भी हो सकती है और उन्हें उचकाने ऊपर उछालने का उपाय विशेष भी हो सकती है। अस्तु।